www.thearyasamaj.org

ओ३म्

# आर्य जगत

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 20 नवम्बर 2016 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 20 नवम्बर 2016 से 26 नवम्बर 2016

कार्तिक कृ. –07 ● वि० सं०–2073 ● वर्ष 58, अंक 48, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

## डी.ए.वी. द्वारका (दिल्ली में) आयोजित हुआ भव्य वार्षिकोत्सव

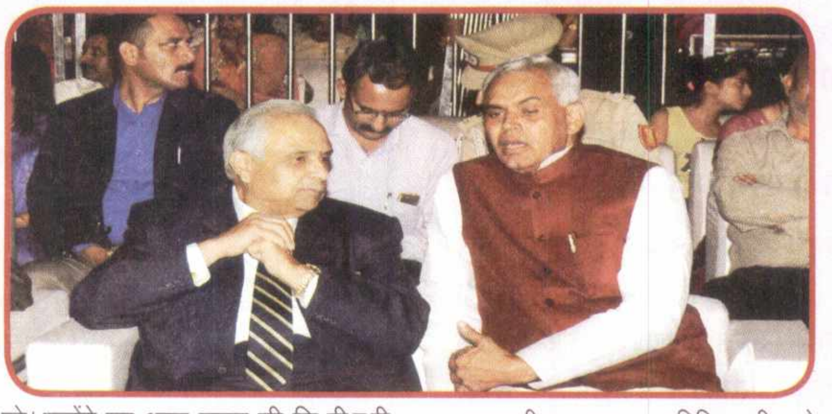

दिनाँक 12 नवंबर 2016 को डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका में वार्षिकोत्सव *'स्योना–रे आफ लाइट'* (प्रकाश की एक किरण) बड़े ही हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में हिमाचल प्रदेश के महामहिम राज्यपाल आचार्य श्री देवव्रत जी उपस्थित थे साथ ही इस शुभ अवसर पर डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी आर्यरत्न श्री पूनम सूरी जी एवं मैनेजिंग कमेटी के अन्य गणमान्य सदस्य तथा विभिन्न डी.ए.वी. विद्यालयों के प्रधानाचार्य भी उपस्थित थे।

महामहिम राज्यपाल आचार्य श्री देवव्रत जी ने अपने संबोधन में विद्यालय की प्रशंसा करते हुये यह संदेश दिया कि हमें नित्य नूतन ज्ञान एवं तकनीक का प्रयोग करते हुए भी अपनी वैदिक संस्कृति को नहीं भूलना चाहिए क्योंकि पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण हमारी सभ्यता एवं संस्कृति को बहुत हानि पहुँचा रहा है। इसके लिए विद्यालयों को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। अभिभावकों एवं अध्यापकों को अपनी जिम्मेदारी निभाते हुए भावी पीढ़ी को सुसंस्कारित करना होगा जिससे **'मातृ देवोभव, पितृ देवाभव आचार्य देवोभव'** की वैदिक संस्कृति सदैव बनी रहे। उन्होंने यह आशा व्यक्त की कि डी.ए.वी. विद्यालय अपना यह कार्य बखूबी कर रहे है और आगे भी इस दायित्व का निर्वहन करते रहेंगे।

कार्यक्रम का शुभारंभ मुख्य अतिथि एवं गणमान्य अतिथियों के द्वारा दीप प्रज्ज्वलन से हुआ जिसमें पंचतत्वों की शुचिता बनाए रखने का संकल्प निहित था। सम्माननीय अतिथियों का स्वागत विद्यालय के चेयरमैन श्री टी.आर. गुप्ता जी, मैनेजर श्रीमती आदर्श कोहली जी एवं विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती मोनिका मेहन द्वारा औषधीय पौधे एवं शाल भेंट करके किया गया। विद्यालय के चेयरमैन श्री टी.आर. गुप्ता जी ने स्वागत संबोधन प्रस्तुत किया।

सम्माननीय मुख्य अतिथि जी ने शैक्षणिक एवं सहशैक्षणिक (कला, संगीत, साहित्य एवं खेल) क्षेत्र में श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले द्वारकाधीरों को ट्राफी देकर सम्मानित किया। इस महत्वपूर्ण अवसर पर विद्यालय की पत्रिका *'इन्कोमियम'* का लोकार्पण मुख्य अतिथि के करकमलों द्वारा हुआ। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती मौनिका मेहन ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट में विद्यालय एवं विद्यार्थियों की विभिन्न उपलब्धियों का वर्णन किया।

कार्यक्रम का आकर्षण विद्यालय के आर्केस्ट्रा ग्रुप की प्रस्तुति के साथ ही आरम्भ हो गया था जिसमें कक्षा पांचवी से ग्यारहवीं कक्षा तक के छात्रों ने भाग लिया, तत्पश्चात् किंडरगार्टेन विंग के नन्हें मुन्नें बच्चों की प्रस्तुति थी जिसने सभी का मनमोह लिया। कार्यक्रम का प्रमुख आकर्षण 'दादी की टोली' थी जिसके माध्यम से भारत की समृद्ध संस्कृति, कला, संगीत एवं उसकी विविधता को देश के विभिन्न प्रांतों के नृत्य एवं संगीत के द्वारा प्रस्तुत किया गया। इस कार्यक्रम का प्रमुख संदेश अपनी समृद्ध संस्कृति तथा अनेकता में एकता को बनाये रखना एवं देश के रक्षक सैनिकों के योगदान के प्रति सम्मान एवं कृतज्ञता व्यक्त करना था।

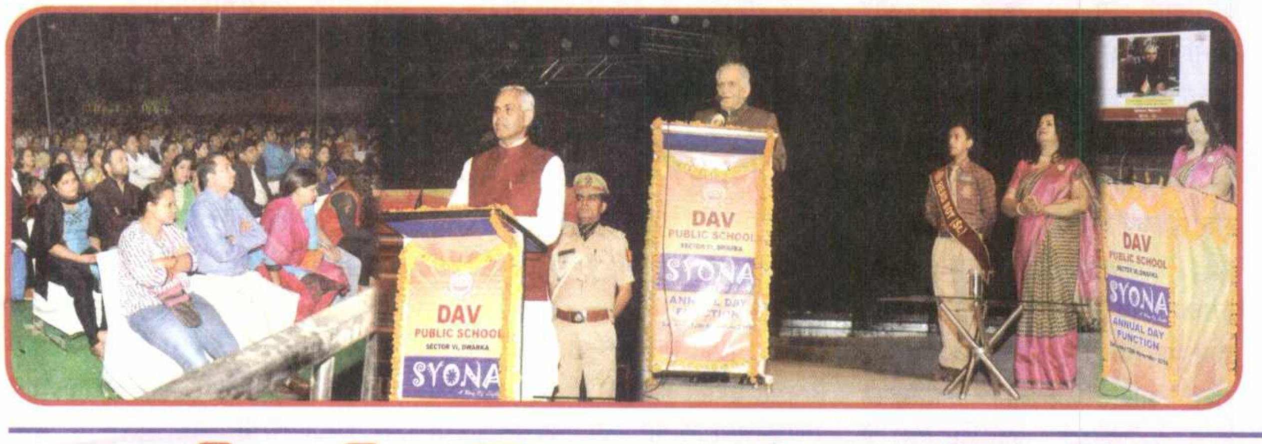


कार्यक्रम का समापन विद्यालय की मैनेजर श्रीमती आदर्श कोहली के धन्यवाद प्रस्ताव से हुआ जिसमें उन्होंने सम्माननीय अतिथियों का आभार व्यक्त किया तथा कार्यक्रम के सफल आयोजन में सभी के सहयोग के लिए धन्यवाद दिया।

## डी.ए.वी. युनिट–8, भुवनेश्वर में ऋषि निर्वाण दिवस

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, ओडिशा की ओर से प्रातः स्मरणीय स्वामी दयानन्द जी का निर्वाण दिवस दि. 30.10.2016 को डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, युनिट–8, भुवनेश्वर में मनाया गया। सभा की प्रधाना प्राचार्या डॉ. श्रीमती भाग्यवती नायक जी ने दीप प्रज्ज्वलित करते हुए **तमसो मा ज्योतिर्गमय** का अर्थ विस्तारपूर्वक छात्रों को समझाया गया। विद्यालय के धर्मशिक्षक आचार्य सन्तोष कुमार ने यज्ञ का संचालन किया, जिसमें विद्यालय के सभी अध्यापक, अध्यापिका तथा छात्रछात्राओं ने भाग लेकर यज्ञ में आहुतियाँ देकर अपने जीवन को यज्ञमय बनाया। छात्रछात्राओं ने ऋषि दयानन्द जी के व्यक्तित्व ओर जीवनचरित्र पर प्रकाश डाला। विद्यालय के संगीत शिक्षक श्री मातृप्रसाद दास के वैदिक भजन सबका मन मोह लिया। दीपावली के शुभ अवसर पर डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति के प्रधान, श्री पूनम सूरी जी द्वारा प्रदत्त संदेश को सबके सम्मुख पढ़ा गया। जिज्ञासु होने के साथ–साथ स्वामी दयानन्द जी के अधूरे कार्य को संपूर्ण करने के लिए प्रेरणा प्रदान। शान्तिपाठ पूर्वक वैदिक वातावरण में सभा को विसर्जित किया गया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

www.thearyasamaj.org



ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 20 नवम्बर 2016 से 26 नवम्बर 2016

# दोनों हाथों से भर-भरकर दे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

**दिवो विष्ण उत वा पृथ्व्याः, महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।**
**हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैः, आप्रयच्छ दाक्षिणादोत सव्यात्।।**

अथर्व 7.26.8

ऋषिः **मेधातिथिः**। देवता **विष्णुः**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**विष्णो**) हे सव्रव्यापक परमात्मन्! (**दिव**) द्युलोक से (**उत वा**) और (**पृथिव्याः**) पृथिवी–लोक से [तथा] (**विष्णो**) हे विश्वान्तयामिन्! यज्ञ के देव! (**महः**) महनीय (**उरोः**) विस्तीर्ण (**अन्तरिक्षात्**) अन्तरिक्ष–लोक से (**बहुभिः**)वहुत– से (**वसव्यैः**) ऐश्वर्य–समूहों से (**हस्तौ**) दोनों को (**पृणस्व**) भर ले। (**दक्षिणात्**) दाहिने हाथ से (**आ प्रयच्छ**) दान दे (**उत**) और (**सव्यात्**) बाएँ से [भी] (आ [प्रयच्छ]) दान दे।

● हे विष्णु! हे सर्वव्यापक! हे विश्वान्तर्यामिन्! हे विश्व–ब्रह्माण्ड के स्वामिन! तुम अपूर्व धनाधीश हो। विश्व के द्युलोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक में जो धन बिखरा पड़ा है, वह सब तुम्हारा ही है। अतः तुम धन–कुबेर हो। एक और तुम धनपति हो ओर हम अकिंचन हैं। अतः हम चाहते हैं कि तुम अपने कोष में से दाहिने–बाएँ दोनों हाथों से भर–भरकर हमें दान दो। तुम्हारे रचे द्यु–लोक में प्रकाश का अनुपम पारावार भरा पड़ा है। वह प्रकाश तुम हमें भी प्रदान करो। तुम्हारे रचे विशाल अन्तरिक्ष–लोक में वायु और पर्जन्य का सागर उमड़ रहा है। उसमें से हमें भी प्राण–वायु और अमृतमय वृष्टि–जल प्रदान करो। तुम्हारे रचे पृथ्वी–लोक से सुवण, रजत, ताम्र अयस, हीरे, मोती आदि ऐश्वर्यों की निधियाँ भरी हुई हैं। वे ऐश्वर्य तुम हमें भी प्रदान करो। अल्प मात्रा में नहीं, प्रचुर मात्रा में प्रदान करो, क्योंकि हम ऐश्वर्यमय जीवन जीने की ही साध लिये हुए हैं।

पर हे विश्वव्यापी देव! हम केवल इन भौतिक ऐश्वर्यों का ही पाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहते। हम शरीरस्थ द्यु–लोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक के ऐश्वर्यों को भी पाने के लिए आतुर हो रहे हैं। हमारा अन्नमय कोश ही पृथिवी–लोक है, जिसमें शरीर की त्वचा से लेकर अस्थि–पर्यन्त सब ढ़ांचा आ जाती है। असका ऐश्वर्य है शारीरिक स्वास्थ्य और शारीरिक बल, जिसके बिना मनुष्य का जीवन–यापन,व्यान,उदान, समा, इन पांचों से तथा कर्मेन्द्रियों से मिलकर प्राणमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है प्रागण, अपानन आदि क्रियाओं का समुचित रूप से होते रहना तथा हस्त–पादादि कर्मेन्द्रियों को कार्य–क्षम बने रहना। मन और ज्ञानेन्द्रियों से मिलकर मनोमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है मन के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों का ज्ञान–प्राप्ति में सहायता होना तथा मन का सत्यसंकल्प करना। ज्ञानेन्द्रियों–सहित बुद्धि विज्ञानमयकोश कहलाता है। इसका ऐश्वर्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान पर ऊहापोह करके निश्चयात्मक ज्ञान अर्जित करना। आनन्दमय कोश द्यु–लोक है, जहाँ हृदयपुरी में प्रतिष्ठित आत्मा के अन्दर ब्रह्म का वास है। इसका ऐश्वर्य है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति। हे विष्णुदेव! तुम इन समस्त ऐश्वर्यों से भी भरपूर करने की कृपा करते रहो।

हे जगत्पिता! तुम निरैश्वर्य की अवस्था से पार करके हमें अधिकाधिक ऐश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ करते रहो।

❑

**वेद मंजरी से**

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

# मानव जीवन गाथा

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में चर्चा हो रही थी कि बुरे संगत मनुष्यों और परिवारों को समाप्त कर देती है। जो भी शुभ या अशुभ कर्म तुमने किए हैं, उनका फल भोगना पड़ेगा अवश्य। कर्म के फल से बचने का कोई मार्ग नहीं।

सत्य विचार एवं सत्संग के प्रभाव से सबका जीवन बदल जाता है। सत्य आचार का अर्थ है हम स्वयं को पवित्र बनाकर, उत्तम बनकर रहें। सत्य व्यवहार का अर्थ है दूसरों से सत्य व उत्तम बर्ताव करें।

सत्याहार और सत्याचार आवश्यक है, परन्तु सबसे आवश्यक है सत्य व्यवहार। यदि दूसरों के साथ आपका बर्ताव उत्तम नहीं तो आप सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकते। संसार में जीवन का आधार–ईश्वर। वहीं सच्चा है और वहीं सबका आधार है जो सदा रहता है, कहीं जाता भी नहीं और परिवर्तित भी नहीं होता। मन को प्रत्येक दिशा में रोककर, एकाग्र करके ओ३म् का ध्यान करो, तो वह दृष्टिगोचर न होने वाला भी दृष्टिगोचर होता है।

——अब आगे

सातवाँ दिन

पिछले भाषण में सत्य विचार की बात कहते हुए मैंने श्री गुरु नानकदेव जी महाराज के उन पवित्र शब्दों की चर्चा की थी जिनका वर्णन 'सिद्ध घोष्ट' में आता है। उस पवित्र वाणी में श्री गुरु नानकदेव जी ने यह भी कहा कि "गुरुमुख वह है जिसके हृदय में किसी के लिए वैर या शत्रुता न हो और जो राम के रंग में रंगा हो।"

आज एक सज्जन मिले। उन्होंने कहा, "आपने गुरुमुख की बात तो कह दी कि सिक्ख किसको कहते हैं, परन्तु आर्य में भी गुण होना चाहिए या नहीं?" निश्चितरूपेण आर्य में भी गुण होना चाहिए। 'अष्टाध्यायी' के अनुसार आर्य कहते हैं–

**अर्यस्यापत्यम् आर्यः ।**

जो ईश्वर का पुत्र है, वह आर्य है। यास्काचार्य ने भी यही निर्वचन किया है। निरुक्त में लिखा है–

**आर्यः ईश्वरपुत्रः ।**

आर्य वह है, ईश्वर जिसका पिता है। यदि आर्य ईश्वर के बेटे का नाम है, तो बाप का कोई गुण बेटे में भी होना चाहिए। परमात्मा के कुछ गुण जिसमें हैं उसे आर्य कहते हैं। 'महाभारत' के उद्योगपर्व में एक प्रश्न पूछा गया है, "आर्य कौन है?" फिर इसी स्थान पर इस प्रश्न का उत्तर दिया गया–

"आर्य वह है जो विरोध और शत्रुता को चमकाता नहीं, बढ़ाता नहीं, जो अभिमान नहीं करता, जो तेजयुक्त है और जो संकट आने पर भी अकार्य नहीं करता–उसी को, हाँ, उसी को आर्यपुरुष आर्य कहते हैं।" इसी स्थान पर आर्य के कुछ गुण भी बताए गए हैं–

"जो अपने सुख में दूसरों के दुःख को भूल नहीं जाता, जो दूसरों के दुःख को देखकर प्रसन्न नहीं होता, जो देकर पश्चात्ताप नहीं करता और जो सात्त्विक स्वभाववाला है, वही आर्य है।"

श्री गुरु नानकदेव जी की पवित्र वाणी का हवाला देते हुए मैंने कहा था, 'जो लोग वैर व शत्रुता की भावना से कोई भी कार्य करते हैं और जो राम के रंग में रंगे नहीं, वे गुरुमुख नहीं हैं, सिक्ख नहीं है।' आज वेद और शास्त्रों के आधार पर मैं कहता हूँ कि जो लोग धर्म, सम्प्रदायों और भाषाओं के नाम पर लोगों में फूट पैदा करते हैं, इन्हें परस्पर लड़ाते हैं और राष्ट्र को निर्बल करके उसे हानि पहुँचाते हैं, वे आर्य हैं ही नहीं। यह बात यदि बुरी लगे तो क्षमा चाहता हूँ, परन्तु सच्ची बात यही है।

परन्तु यह तो ऐसे ही बात उत्पन्न हो गई, इसलिए मैंने कह दी, नहीं तो मैं आत्मदर्शन का वर्णन कर रहा था। यह बता रहा था कि आत्मदर्शन कैसे होता है; मुण्डक उपनिषद् के उस मन्त्र की व्याख्या कर रहा था जिसमें कहा है–

**सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा**

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org



# जीव कर्म में स्वतन्त्र या परतन्त्र?

● पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय

बहुधा यह प्रश्न पूछा जाता है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है अथवा नहीं? इसे घुमा–फिराकर भी पूछा जाता है, जैसे–(1) क्या मनुष्य ऐसा त्रिभुज बनाने में स्वतन्त्र है, जिसकी दो भुजायें तीसरी के बराबर या उससे छोटी हों? (2) क्या मनुष्य जल के रासायनिक सूत्र से भिन्न अनुपात में हाइड्रोजन और ऑक्सीजन को मिलाकर जल बनाने में स्वतन्त्र है? (3) यदि नहीं, तो मनुष्य कर्म करने में कैसे स्वतन्त्र है? अर्थात् पाप–पुण्य का प्रश्न नहीं उठना चाहिए। वस्तुतः कर्म–स्वातन्त्र्य का अर्थ प्राकृतिक नियमों को तोड़ने का स्वातन्त्र्य नहीं है। सब जानते हैं कि मनुष्य वाक्–इन्द्रिय से बोलता है, किसी अन्य इन्द्रिय से नहीं बोल सकता। सो, उसकी स्वतन्त्रता इसमें है कि वह 'यह शब्द बोले या दूसरा'? ईश्वर ने संसार की ऐसी व्यवस्था की है कि कर्त्ता के लिए सदैव विकल्प है। इससे कर्त्ता पर दायित्व बना रहता है। ऋषि दयानन्द भी 'सत्यार्थ प्रकाश' (समुल्लास–7, प्रस्तर–53,54) में कहते हैं–

**प्रश्नः** जीव स्वतन्त्र है या परतन्त्र?

**उत्तरः** अपने कर्त्तव्य कर्मों में स्वतन्त्र और ईश्वर की व्यवस्था में परतन्त्र है। 'स्वतन्त्रः कर्त्ता।' यह पाणिनीय व्याकरण का सूत्र है। जो स्वतन्त्र अर्थात् स्वाधीन है, वही कर्त्ता है।

**प्रश्नः** स्वतन्त्र किसको कहते हैं?

**उत्तरः** जिसके अधीन शरीर, प्राण, इन्द्रिय और अन्तःकरणादि हों। जो स्वतन्त्र न हो तो उसको पाप–पुण्य का फल प्राप्त कभी नहीं हो सकता, क्योंकि जैसे भृत्य स्वामी और सेना सेनाध्यक्ष की आज्ञा अथवा प्रेरणा से युद्ध में अनेक पुरुषों को मार कर अपराधी नहीं होते, वैसे परमेश्वर की प्रेरणा और अधीनता से काम सिद्ध हों तो जीव को पाप वा पुण्य न लगे। उस फल का भागी प्रेरक परमेश्वर होवे। नरक–स्वर्ग अर्थात् सुख–दुःख की प्राप्ति भी परमेश्वर होवे। जैसे किसी मनुष्य ने शस्त्रविशेष से किसी को मार डाला तो वही मारने वाला पकड़ा जाता है और वही दण्ड पाता है, शस्त्र नहीं। वैसे ही पराधीन जीव पाप–पुण्य का भागी नहीं हो सकता। इसलिए अपने सामर्थ्यानुकूल कर्म करने में जीव स्वतन्त्र, परन्तु जब वह पाप कर चुकता है तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर पाप के फल भोगता है। इसलिए कर्म करने में जीव स्वतन्त्र और पाप के दुःखस्वरूप फल भोगने में परतन्त्र होता है।"

उपर्युक्त प्रश्नोत्तर में ऋषि दयानन्द 'जीव' शब्द का प्रयोग करते हैं, 'मनुष्य' का नहीं, जिसका अर्थ है कि कर्म–स्वातन्त्र्य मनुष्य तक पूर्णतः सीमित नहीं है, अपितु पशु–पक्षी भी कुछ सीमा तक कार्य करने में स्वतन्त्र हैं। इसकी समीक्षा से पहले शिलर (एफ.सी.एस. शिलर ब्रिटिश उपयोगितावादी विचारक हैं। वे वस्तुतः मानववादी हैं और उनका मानववाद व्यक्तिवादी नहीं है। उनके विचारों में वस्तुनिष्ठता के साथ आत्मनिष्ठता भी है।) का मत जानना आवश्यक होगा, जो सीमित अंशों में कर्म स्वतन्त्रता को स्वीकार करते हैं। उनकी मान्यता में विज्ञान के लिए नियतिवाद आवश्यक है ताकि जगत् की व्यवस्था बनी रहे और भविष्य की गणना हो सके; आचार–शास्त्र के लिए स्वतन्त्रता आवश्यक है किन्तु यह न्यूनतम हो, बस, नैतिक दायित्व बनाये रखने के लिए। हाँ, वे 'इच्छा' के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता आवश्यक मानते हैं। उनका यह मानना है कि पूर्णतः अच्छा मनुष्य स्वतन्त्रता का आकांक्षी नहीं है, किन्तु बुरा मनुष्य स्वयं को सुधारने में स्वतन्त्रता का उपयोग कर सकता है। स्थूल दृष्टि से यह दो वर्गों वाला मत योग दर्शन के 'योगी' और 'सांसारिक व्यक्ति' के दो वर्गों वाले सूत्र का स्मरण कराता है, जो निम्नवत् है–

**कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम्।।**

–योग दर्शनः पाद–4, सूत्र–7

(योगी के कर्म अशुक्ल–अकृष्ण होते हैं, अर्थात् फलकामना एवं पाप, दोनों से रहित; सांसारिक व्यक्तियों के कर्म तीन प्रकार के होते हैं, अर्थात् शुभ, अशुभ एवं मिश्रित।)

योगदर्शनकार ने कर्मों के चार विभाग किये हैं–शुक्ल, कृष्ण, शुक्ल–कृष्ण और अशुक्ल–अकृष्ण। पुण्य कर्मों को 'शुक्ल' कहते हैं; ये अपने तथा अन्यों के लिए सुखप्रद होते हैं। दुःखप्रद कर्मों को 'कृष्ण' कहते है; जैसे–हिंसा, चोरी, अन्याय आदि। जो कर्म सुखप्रद एवं दुःखप्रद दोनों प्रकार के होते हैं, उन्हें 'शुक्ल–कृष्ण' कहते हैं; जैसे–कृषि करना, बाँध बनाना, युद्ध करना आदि। ये तीनों प्रकार के कर्म 'सकाम कर्म' होते हैं। सांसारिक व्यक्ति ये ही कर्म किया करते हैं। योगी–जन निष्काम कर्म करते हैं, जो 'अशुक्ल–अकृष्ण' कहलाते हैं।

विभिन्न कर्मों और उनके फलों के विषय में ऋषि दयानन्द कहते हैं कि (1) जब पाप बढ़ जाता और पुण्य न्यून होता है, तो मनुष्य का जीव पश्वादि नीच शरीर पाता है; (2) जब धर्म अधिक होता और अधर्म न्यून होता है, तब देव अर्थात् विद्वानों का शरीर मिलता है; (3) जब पुण्य–पाप बराबर होता है, तब साधारण मनुष्य का जन्म मिलता है। (इस विषय पर ऋषि दयानन्द के प्रश्नोत्तर अध्याय 6 के शीर्षक 'नर पशु में एक–सा जीव' के अन्तर्गत द्रष्टव्य हैं।) कर्म–फल के सूक्ष्म विषय पर सर्वमान्य कहावत यही है कि 'जैसा बोओगे, वैसा काटोगे।' मनुष्य स्वभाव से कर्म किये बिना नहीं रहता। उसके कर्म अनेक प्रकार के होते हैं। कुछ कर्म धूलि कणों की भाँति हल्के होते हैं, जो अनायास वस्त्रों पर लग गये और सरलता से हट भी गये। कुछ आदतों की रस्सी के बलों की भाँति गम्भीर प्रभाव वाले होते हैं। इन्हीं को योग दर्शन में श्वेत, कृष्ण और श्वेत–कृष्ण कहा गया है। ये सूक्ष्म–शरीर में सञ्चित रहते हैं और अगले जन्म की अच्छी–बुरी योनि के निर्धारण में कारण बनते हैं।

जैसे दूर से आकर दूर तक जाने वाले विभिन्न रेल–मार्ग जंक्शन स्टेशन पर मिलते हैं, उसी प्रकार एक योनि छोड़कर दूसरी योनि पाने वाले जीवात्मा साधारण मनुष्य की योनि पर आकर ऊपर या नीचे जाते हैं। परन्तु योगी अपने अध्यात्म एवं योगाभ्यास से पवित्र होकर उस उच्च अवस्था को प्राप्त कर लेता है, जहाँ निम्न गति वाले विचार समाप्त हो जाते हैं। वह सकाम कर्मों तथा उनके फलों से ऊपर उठ जाता है। योग दर्शन के अनुसार उसके कर्म 'अशुक्ल–अकृष्ण' की श्रेणी में आ जाते हैं। ऐसे योगी सरीखे व्यक्ति को ही शिलर 'पूर्णतः अच्छा मनुष्य' बताकर उसे स्वतन्त्रता से वञ्चित करते प्रतीत होते हैं। स्वतन्त्रता से वञ्चित करना तो उचित नहीं है। वस्तुतः दीर्घकालीन अभ्यास से योगियों का अन्तःकरण ऐसा पवित्र हो जाता है कि उन्हें अधर्म की ओर झुकने का विचार भी नहीं आता। वे कर्म करने में स्वतन्त्र हैं, पूर्णतः स्वतन्त्र हैं; उनकी स्वतन्त्रता बाधित नहीं होती। उन्होंने स्वतन्त्रता का सही मूल्य जान लिया है और बाह्य दमन की आवश्यकता को पार कर लिया है।

योगियों की स्वतन्त्रता अधिकतम है अथवा न्यूनतम, यह वर्णन की शैली पर निर्भर करता है। ये योगी–जन उच्चतम स्तर के जीवात्मा हैं जो मुक्ति के द्वार तक पहुँच गये हैं। मानवी आचार–शास्त्र की सीमा उससे कुछ पहले तक जाती है। जैसे पुलिस एवं अधीनस्थ न्यायालय का नियन्त्रण उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों पर नहीं होता, जबकि ये न्यायाधीश भी नियमों से ऊपर नहीं होते; उसी प्रकार आचार–शास्त्र के नियमों का नियन्त्रण मुमुक्षु–जन पर नहीं होता। मौलिक रूप से, आचार–शास्त्र 'नैतिकता का शास्त्र' है, जो मनुष्य को सही–गलत का निर्णय करके सही को अपनाने की शिक्षा देता है।

ऋषि दयानन्द का तत्त्व–दर्शन जीवात्मा को कर्मों एवं शुभ कर्मों से जोड़कर देखता है। इसी दर्शन में आचार–शास्त्र के तत्त्व छिपे हैं। जीवात्मा स्वभाव से ससीम है; अर्थात् अल्पशक्ति वाला है; अर्थात् इससे त्रुटि हो सकती है; त्रुटि करना अर्थात् गलत मार्ग चुनना। यदि कोई एक बार गलत मार्ग चुन ले तो यही सम्भावना रहती है कि वह सत्य मार्ग से दूर–दूर चलता जाएगा, जब तक कि त्रुटि स्वीकार न कर ले और आगे सत्य–मार्ग पर ही चलने को कटिबद्ध न हो जाए। यह बात ध्यान में रखने की है कि सत्य–मार्ग एक होता है जबकि गलत मार्ग अनेक होते हैं। एक गलती अनेक गलतियों को जन्म देती जाती है और एक समय मनुष्य कठिनाइयों के जंगल में पहुँच जाता है।

**'ऋषि दयानन्द का तत्त्व दर्शन' से साभार**

www.thearyasamaj.org



# सांसारिक सुख–दुख का कारण इन्द्रियाँ

● डॉ. विजेन्द्र पाल सिंह

इन्द्रियाँ मनुष्य के सुख–दुख का कारण हैं इन्हीं से सुख व इन्हीं से दुख प्राप्त होते हैं। इन्द्रियों को अपने वश में रखना अति आवश्यक है। नेत्र से देखने का ज्ञान होता है, कर्ण से सुनना, त्वचा से स्पर्श, नासिका से सूँघने का, जिह्वा से स्वाद का ज्ञान होता है इनके सम्यक् प्रयोग से सुख व असम्यक् प्रयोग से दुख होता है।

रूचिकर भोजन मिला अधिक खा लिया अथवा पुनः खा लिया वहीं पाचन क्रिया विकृत हो जाएगी और मनुष्य रोग ग्रस्त हो जाएगा मधुरता का अधिक प्रयोग मधुमेह को जन्म देगा। बुरे गंदे–दृश्य व संवादों का प्रयोग, गंदे चित्रों को देखने इससे मानव का व्यवहार व चरित्र दूषित हो बुरे कर्मों में प्रवृत्त होता है जिससे मनुष्य की प्रवृत्ति आपराधिक बन जाती है। चाल–चलन खराब हो जाता है। दूषित अन्न के प्रयोग से, मादक द्रव्यों के प्रयोग से मन भी दूषित हो जीवन को नरक बनाता है। बुरी आदतें मनुष्य को मानवता से विपरीत ले जाती हैं। अधार्मिक बल देती हैं।

गुरुकुल व आश्रमों में प्राचीन काल में चरित्र व आचरण की शिक्षा पर अधिक बल दिया जाता था। अतः वे विद्यार्थी ही आगे चलकर महान बलशाली यशस्वी चरित्रवान देशभक्त पराक्रमी बनते थे।

आज हमारी वह शिक्षा विलुप्त प्रायः होती जा रही है। जहाँ चरित्र निर्माण पर बल दिया जाता था इन्द्रियों पर उनका वश होता था और हमारा मन जा चंचल है कहीं नहीं लगता, कहीं नहीं रूकता उस पर नियन्त्रण होता था। इन्द्रियाँ हमारे जीवन को अच्छा बुरा बनाती हैं।

मद्य, मांस, भाँग, गांजा आदि का सेवन करने लगता है। चोरी व्यभिचार दुराचार करता है। आज चारों ओर जितने भी दुष्कर्म हो रहे हैं, इन्द्रियों को वश में न रखने के कारण ही तो हैं। जरा सी कोई बात हुई क्रोध की सीमा पार कर दी, गाली–गलौज और मार–पीट की स्थिति उत्पन्न हो गई। पिता–पुत्र, भाई–भाई व अन्यों से सम्बन्ध विकृत होने का कारण ही भौतिक इन्द्रियाँ हैं। यदि जीवन को श्रेष्ठ बनाना है तो इन्द्रियों को घोड़ों की लगाम की भाँति वश में रखना होगा।

इन्द्रियों का सम्बन्ध मन से, मन का सम्बन्ध जीवात्मा से है। इन्द्रियाँ अपने–अपने विषयों में तथा मन इन्द्रियों से जुड़ा रहता है। मन आत्मा से लगा होता है। प्राणों को प्रेरणा कर अच्छे बुरे कर्मों में लगाता है परन्तु अन्तर्यामी परमात्मा की ओर से अन्दर से ही बुरे कार्यों में भय व शंका तथा लज्जा होती है परमात्मा के ज्ञान के अनुरूप आचरण करने पर सुख व विपरीत आचरण करने पर दुख उत्पन्न होते हैं। बुरे कर्म करने से पाप बढ़ जाते हैं। इसका जन्म पर भी प्रभाव होता है

**”जब पाप बढ़ जाता है और पुण्य न्यून होता है तब जीव को पशु आदि नीच शरीर और जब धर्म अधिक तथा अधर्म न्यून होता है तब देव अर्थात् विद्वानों का शरीर मिलता है जब पुण्य–पाप बराबर होता है तब साधारण मनुष्य का जन्म होता है।“ – स.प्र.नवम समु.**

मनुष्य को पाप व पुण्य कर्मों से ही नरक व स्वर्ग की प्राप्ति होती है। पूर्व जन्म के पुण्य व पाप के अनुसार वर्तमान जन्म और वर्तमान तथा पूर्वजन्म के कर्मानुसार भावी जन्म होता है।

मनुष्य को सत्याचरण रूप कर्म करने चाहिए। इन्द्रियों को बुरे विषयों में लगाने से उसका फल भी पापरूप में मिलता है। पुण्यरूप कर्म करने से उसका फल अच्छा मिलता है। अपनी बुद्धि व आत्मा में स्थित सत्यज्ञान और आनन्दस्वरूप उस परमात्मा को जानना चाहिए। परमात्मा को जान कर ही हम सुखों को प्राप्त कर सकते हैं। वही सब प्रकार के बल, विद्या व सुखों को देने वाला है।

वही परमात्मा पुण्य–पाप के उत्तम, मध्यम और निकृष्ट होने से मनुष्यादि में भी उत्तम, मध्यम, निकृष्ट शरीर के आधार फल देता है। मुक्ति का आनन्द ही वास्तविक सुख है। मनुष्य जीवनभर सुख की तलाश में रहता है। वह परमात्मा के आनन्दस्वरूप सुख की प्राप्ति से मिलता है। जिसे ज्ञानी, विद्वान व परमात्मा के मार्ग का अनुसरण करने वाले, सत्याचार करने वाले धर्माचारी ही जान सकते हैं व प्राप्त कर सकते हैं। मुक्ति के आनन्द को जीवात्मा जब भोगता है, उसी को स्वर्ग कहते हैं।

”यही सुखविशेष स्वर्ग और विषयतृष्णा में फँस कर दुःखविशेष का भोग करना नरक कहलाता है। 'स्व' सुख का नाम है। स्वः सुखं गच्छति यस्मिन् स स्वर्गः अतो विपरीतो दुःख भोगो नरक इति' जो सांसारिक सुख है वह सामान्य स्वर्ग और जो परमेश्वर की प्राप्ति से आनन्द है वही विशेष स्वर्ग कहलाता है।“– स.प्र.,नवम समु.

यह जीवन हमें सत्कर्म करने हेतु मिला है। इसमें ही हम ईश्वर को जानकर सत्या–चरण योगाभ्यास द्वारा मोक्ष का मार्ग प्राप्त कर सकते हैं।

हमें पाप–पुण्य की ओर ले जाने वाली इन्द्रियाँ ही हैं जो अच्छे–बुरे विषयों में लगी रहती हैं। इन्हें बुरे कर्मों से हटाकर सदैव अच्छे विचार लाने चाहिए। धर्माचरण करना चाहिए। अतः वेदादि सत्य शास्त्रों का ज्ञान अर्थात् स्वाध्याय करते रहना चाहिए धर्मानुष्ठान करना चाहिए। इन्द्रियों का निग्रह कर मन पर नियन्त्रण करना व अच्छे कर्मों में प्रवृत्त रहना चाहिए यदि जीवन में सुख की आशा रखते हैं तो इन्द्रियों पर नियन्त्रण आवश्यक है।

इन्द्रियों का सम्पर्क भौतिक जगत से है और हम इन्द्रियों से स्पर्श, देखने, सुनने, स्वाद, सुगन्ध आदि का ज्ञान प्राप्त करते हैं। परन्तु इन्द्रियों का असम्यक् प्रयोग भी होता है जो दुखदायी है। स्वाद के वशीभूत हो अधिक खा लेना, कान व जिह्वा से गलत सुनना, बोलना; अपशब्दों का श्रवण व अभद्र बोलना, बुराई करना; नेत्रों का दुरुपयोग करना बुरे, गन्दे, अश्लील दृश्य व बुरे कार्यो को देखें और सुने तो उसको दूर करने का प्रयत्न न करे, इन्हीं से मनुष्य दुख सागर में डूबता जाता है। निन्दा, बुराई, पापकर्म, दुष्कर्म इन्द्रियों से ही होतें हैं। अतः इन्द्रियों पर नियन्त्रण हटते ही हम बुराइयों में पड़ जाएँगे। नियन्त्रण खोने से ये नरक की ओर ले जाती हैं। इसके लिए हमें आचरण श्रेष्ठ बनाना चाहिए।

इन्द्रियों के वशीभूत हो इनका असम्यक् प्रयोग कर ही मनुष्य ईर्ष्या, लोभ, मोह प्रमाद आदि में पड़ दुखसागर में डूब जाता है। हम इन्द्रियों के वश में न रहें अपितु इन्द्रियाँ हमारे अधीन रहें।

बाजार में जा रहे हैं चटपटी चाट देख मुँह में पानी आ गया। चाट खाने लगे और स्वाद में अधिक खा गए। शाम हुई तो पेट फूल गया, दर्द हुआ, स्थिति इतनी भयंकर हो गई कि अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। स्वयं तो रूग्णशैया पर पड़े ही साथ में पूरा परिवार सगे सम्बन्धी भी परेशान हुए। हुई न कितनी परेशानी? जिह्वा पर नियन्त्रण खोते ही लेने के देने पड़ गए।

रास्ते में चलते समय किसी से टकरा गए। टकराकर एक दूसरे की ओर आँखे तररने लगे। इतना ही होता तो भी बहुत था परन्तु जिह्वा हिलाए बिना न रहा गया, नियन्त्रण खो दिया। झट से बोले–तुम्हें दिखाई नहीं देता? क्या अन्धे होकर चलते हो? इतने में ही दूसरे ने भी कुछ बोल दिया। बस हो गया झगड़ा–नियन्त्रण होता तो या तो बोलते ही नहीं अथवा कह देते कि भाईसाहब चोट तो नहीं लगी, या कहते क्षमा करना, तो कुछ भी नहीं होता। यह सब हुआ अपने ऊपर नियन्त्रण खोने से।

हम इन्द्रियों के वशीभूत हो मद्य, मांस का प्रयोग करने लगते हैं। आवारा घूमना, व्यर्थ में दूसरों से झगड़ना, चोरी, कामुकता व अन्य दुर्व्यसनों में पड़ जाते हैं और जीवन नरक बना लेते हैं। महाराजा मनु ने कहा है–

**इन्द्रियाणां विचरतां विषयेस्वपहारिषु।**
**संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान्यातेव वजिनाम्।। –सत्यार्थ प्रकाश, दशम समु.**

अर्थात् मनुष्य का यही मुख्य आचार है कि जो इन्द्रियाँ चित्त का हरण करने वाले विषयों में प्रवृत्त कराती हैं, विद्वान उनको रोकने का प्रयत्न करे। जैसे घोड़ों को सारथि रोककर शुद्ध मार्ग में चलाता है। इस प्रकार इनको वश में करके अधर्ममार्ग से हटा के धर्ममार्ग में सदा चलाया करें।

अतः जीवन में श्रेष्ठ बनना है तो इन्द्रियों पर वश रखने का प्रयत्न करें। इन्द्रियाँ ही विषयों के सम्पर्क में रहती है। उनके ऊपर मन–बुद्धि का नियन्त्रण होता है। इन पर निरन्तर नियन्त्रण रखना व बुरे कार्यों अधर्म से दूर रखना चाहिए ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना में लगाते रहे, धर्म में प्रवृत्त कराते रहें, वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करें, स्वाध्याय करें। ईश्वर के समीप पहुँचने का प्रयत्न करते रहें। अवश्य ही विषयों में रत इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर सकेंगे।

चन्द्रलोक कालोनी
खुर्जा
मो.– 8979794715

www.thearyasamaj.org



# महात्मा आनन्द स्वामी

● **शिव नारायण उपाध्याय**

जिन महापुरुषों ने अपना सम्पूर्ण जीवन वेद विद्या के प्रचार प्रसार में लगा दिया उनमें महात्मा आनन्द स्वामी का नाम शीर्षस्थ महापुरुषों में लिया जाता है। उन्होंने केवल भारत में ही नहीं वरन् मारीशस, मलेशिया, सिंगापुर, केन्या, उगाण्डा, तंजानिया आदि कई देशों में वेद–ज्ञान का डंका बजाया। उनका उपदेश सरल भाषा में जिसे सभी श्रोता आसानी से समझ सकें, होता था। व्याख्यान के मध्य में कई रोचक प्रसङ्ग आते थे, तो लोग हंस–हंस कर लोट–पोट हो जाते थे। प्रत्येक व्याख्यान के मध्य में योग विद्या का कोई न कोई चमत्कार अवश्य दिखाते थे। लेखक ने स्वयं उनके कई व्याख्यानों का श्रवण किया है।

स्वभाव से वे हंसोड़ तथा अत्यन्त नम्र थे। वे छोटे से छोटे व्यक्ति को भी सम्मान देते थे। जिन परिवारों में स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रति अधिक स्नेह एवं आदर भाव रहा है उन परिवार वालों से मिलने जाने पर उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता होती थी। अजमेर का शारदा परिवार भी एक ऐसा ही परिवार है। हर विलास शारदा, रामप्रसाद शारदा स्वामीजी के भक्त रहे हैं। दोनों ने स्वामी जी की जीवनी भी लिखकर प्रकाशित की है। एक बार अजमेर में ऋषि मेले पर आनन्द स्वामी भी अजमेर पधारे थे। समय निकाल कर वे शारदा परिवार वालों से मिलने पधारे, इस लेख का लेखक भी वहाँ अपने एक साथी के साथ उपस्थित था। गृह द्वार पर ही परिवार के एक वयोवृद्ध व्यक्ति से वार्तालाप चल रहा था तभी एकाएक स्वामीजी का आगमन हुआ। परन्तु यह क्या? स्वामीजी गृह प्रमुख के चरण स्पर्श करने लग गए। मैंने पूछा–स्वामीजी आप यह क्या कर रहे हैं? तो उत्तर दिया यह परिवार गरिमामय है, इस परिवार ने स्वामीजी के कार्य को आगे बढ़ाने का कार्य किया है इसलिए मेरे लिए ये पूज्य हैं। ऐसे थे विनम्र ऋषि दयानन्द के भक्त महात्मा आनन्द स्वामी। गायन्त्री मन्त्र के जाप करने में उन्हें आनन्द का अनुभव होता था। अपने व्याख्यान में गायत्री मन्त्र की व्याख्या को भी स्थान देते थे। जब लिखना प्रारम्भ किया तो **'महामन्त्र'** को ही प्रथम स्थान मिला। जैसा उनका नाम था वैसा ही उनका आचरण भी था। वे संसार में सभी को खुशहाल में देखना चाहते थे। मुस्कुराते हुए चेहरों को देखकर उन्हें प्रसन्नता होती थी। तभी तो उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश भाग दुर्भिक्ष, भूकम्प आदि से पीड़ित व्यक्तियों की सेवा में लगा दिया था। जब मालाबार में शान्त हिन्दुओं पर मुसलमानों ने आक्रमण कर हजारों हिन्दुओं का कत्ल कर दिया तथा उससे भी अधिक संख्या में हिन्दुओं के यज्ञोपवीत और चोटियाँ काटकर मुसलमान बना लिया तब पीड़ितों की सहायता के लिए घर में निमोनिया से ग्रसित पुत्र को भी छोड़ कर मालाबार पहुँच गए। वे मालाबार में लगभग छः माह तक रहे। उन्होंने डरे–सहमे हिन्दू लोगों में ऐसा आत्म विश्वास जगा दिया कि वे जो डर के मारे घरों में दुबके बैठे थे, अब सीना तान कर गली–बाजारों में दनदनाने लगे। दक्षिण भारत के लोगों को पहली बार पता चला कि आर्य समाज ही एक ऐसी संस्था है जो निर्लिप्त भाव से समाज की सेवा करती है।

आनन्द स्वामी का जन्म 'सूरीवंश' अथवा 'सूर्यवंश' में हुआ था। इनका परिवार जलालपुर जट्टां' में निवास करता था। इनके पिता का नाम गणेशदास था। गणेशदास कट्टर आर्य समाजी थे। बालक चूंकि हर स्थिति में खुश रहता था इसलिए पिता ने इसे खुशहाल चन्द नाम दे दिया। पढ़ाई में बालक अधिक तेज नहीं था अतः पिता ने आगे की पढ़ाई बन्द करवा दी और अपने साथ दुकान में काम कराने लग गए। पहले सोडा वाटर बना कर बेचने का कार्य किया और फिर जुर्राब बनाना प्रारम्भ कर दिया। इसके बाद ही एक आर्य समाजी परिवार की सुशील कन्या 'मेलादेवी' से इनका विवाह हो गया। दिसम्बर 1907 ई. को इनके एक पुत्र ने जन्म लिया, उसका नाम रणबीर रखा गया।

बालक के जन्म के कुछ समय बाद ही आर्य समाज जलालपुर जट्टां का वार्षिकोत्सव हुआ। उसमें लाहौर से दयानन्द महाविद्यालय के प्राचार्य महात्मा हंसराज भी पधारे थे। महात्मा हंसराज के व्याख्यान की रिपोर्ट खुशहाल चन्द ने बनाई तथा दूसरे दिन उसे महात्मा हंसराज को दिखाई तो वे खुशहाल चन्द की प्रतिभा से मुग्ध हो गए और गणेशदासजी से बालक को अपने लिए मांग लिया। पिता ने केवल यह पूछा कि यह वहाँ क्या करेगा? उत्तर में महात्मा हंसराज ने कहा कि यह वही करेगा जिसके लिए भगवान ने इसे जन्म दिया है। पिता ने स्वीकृति दे दी। घटना के दो माह बाद खुशहालचन्द को महात्माजी ने लाहौर बुला भेजा। महात्मा हंसराज ने उन्हें आर्य गजट के सम्पादक रामप्रसादजी के पास भेज दिया। वे वन्दे मातरम् के भी सम्पादक थे। उन्होंने इन्हें अंग्रेज़ी के अध्ययन की सलाह देकर तीस रुपया मासिक वेतन पर अकाउन्ट का काम दे दिया। तीन माह तक आप अकाउन्टैन्ट रहे परन्तु इस समय अकाउन्ट में मन नहीं लगने से लोगों को पैसा देकर भूल जाते थे। इससे जो कमी होती उसे अपने वेतन में से पूरी कर देते। सच तो यह है कि इनके पास वेतन में पांच रुपया ही मिल पाता था। तीन माह बाद जब महात्मा हंसराज को यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने रामप्रसाद जी से कह कर आर्य गजट का सहायक सम्पादक बना दिया। अब तो ये आर्य गजट में अपने लेख भी देने लगे और पाठकों को वे अत्यन्त पसन्द आए। अब आर्य गजट में उनका नाम भी छपने लग गया। अब वे अपनी पत्नी और पुत्र को भी लाहौर में ले आए। एक साइकिल भी खरीद ली। आर्य गजट से जुड़ने पर इनके पहनावे में भी अन्तर आ गया। अब साधारण कपड़े का कुर्ता–पाजामा और सिर पर गोल टोपी ही पहनावा बन गया। निरन्तर लिखते रहने से उनकी लेखनी में भी निखार आ गया था। आर्य गजट को लोग चाव से पढ़ने लगे। इससे वैदिक संस्कृति के प्रभाव क्षेत्र को भी विस्तार मिला।

इसी बीच रानी सदाकौर ने अपने बच्चों की शिक्षा के लिए इन्हें चुन लिया। वह कई गाँवों की स्वामिनी थी और वैदिक विचार धारा से प्रभावित थी। उसने इन्हें पचास रुपया मासिक वेतन तथा रहने को मकान, अनाज, घी, दूध सब निःशुल्क देना स्वीकार किया। महात्मा हंसराज के आदेश प्राप्त होने पर ये उस के गांव रसूलपुर चले गए। बच्चों को पढ़ाने के बाद शेष समय में ये वहीं से आर्य गजट के लिए लिखने लगे। उधर रानी के बच्चे सब जवान थे और उनका पढ़ने में मन नहीं लगता था। ऐसी स्थिति में कुछ समय बाद ही पुनः लाहौर आ गए।

सन् 1914 के प्रारम्भ से ही भारत में क्रान्तिकारियों ने अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया था। महात्मा हंसराज के सुपुत्र बलराज भी क्रान्तिकारियों के साथ सम्पर्क के सन्देह में गिरफ्तार कर लिए गए और उन्हें सात वर्ष कारावास में गुज़ारने पड़े। खुशहाल चन्द जी भी क्रान्तिकारियों से सहानुभूति रखते थे। तब महात्मा हंसराज ने उन्हें चेताया कि आप केवल आर्य गजट का सम्पादन करते रहो। ऐसा कोई काम मत करो कि जो आपकी गिरफ्तारी का कारण बन जाए।

सन् 1919 ई. में अंग्रेजों ने भारत पर ऐसा वज्रपात किया कि देश के लाखों लोगों की खुशियाँ नष्ट हो गईं। अमृतसर में जलियाँवाला बाग में हो रहे एक जलसे पर बिना पूर्व सूचना के गोलीबारी कर दी, सैकड़ों लोग मारे गए, गलियों के नुक्कड़ों पर लोगों को नंगा करके तब तक कोड़े लगाए जाते रहे जब तक कि वे मूर्छित होकर गिर न गए। लाहौर में तो आतंक की पराकाष्ठा ही कर दी। इस समय खुशहाल चन्दजी ने स्वामी दयानन्द की विचार धारा को प्रचारित करने में लगाया। अब मिथ्या प्रचार के होने पर भी लोग सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ने लगे थे। आर्य विचार धारा का निरन्तर प्रसार होने लग गया था।

सन् 1921 ई. कश्मीर में भयंकर अकाल पड़ा। भिम्बर, रजौरी ओर मीरपुर जिलों में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। लोग कारोबार छोड़ कर दूसरे नगरों में चले गए। भूखों का पेट भरने को कोई आगे नहीं आया तब आर्य समाज ने यह उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर लिया। महात्मा हंसराज ने खुशहाल चन्दजी के नेतृत्व में एक टोली कश्मीर में भेज दी। अनाज के ट्रक भर–भरकर अकाल ग्रस्त क्षेत्रों में जाने लगे। खुले हाथों से जरूरत–मन्दों में खाद्य सामग्री का वितरण होने लगा। चावल, चपातियाँ और दाल बना कर दी जाने लगी। अब लोग पुनः अपने घरों को लौटने लगे। अकाल की छाया टल गई। महाराजा कश्मीर को आभास हुआ कि आर्य समाज ही एक ऐसी संस्था है जो पीड़ितों की सहायता करती है। वे खुशहाल चन्दजी की कार्य क्षमता से प्रभावित हुए और उन्हें राज्य का दीवान बन जाने को कहा परन्तु उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। अब तो आर्य गजट के सम्पादन के साथ–साथ इन्हें देश के उपेक्षित तथा पीड़ित लोगों की सेवा के लिए भी भेजा जाने लगा। फिर महात्मा हंसराज के आदेश से आपने **'मिलाप'** समाचार पत्र निकाल दिया। **मिलाप** का पहला अंक 13 अप्रैल 1923 ई. को निकला। यह पत्र लाभ में चला। फलस्वरूप इसकी कमाई से **'वीर मिलाप प्रेस'** खोल लिया। समाचार पत्र की सफलता का कारण यह था कि खुशहाल चन्दजी मनुष्यता और श्रम में विश्वास रखते थे। कर्मचारियों से उनका व्यवहार आत्मीय था। सन् 1929 में कांग्रेस का अधिवेशन लाहौर में हुआ तो मिलाप का विशेषांक निकाला गया। उसमें छपे एक लेख के आधार पद खुशहाल चन्दजी को गिरफ्तार कर लिया गया। न्यायालय में मुकद्दमा चला और उन्हें नौ माह की कड़ी कैद का दण्ड सुनाया गया। खुशहाल चन्दजी हमेशा मीठी वाणी ही बोलते थे। इससे उन्हें दूर–दूर से व्याख्यान के लिए बुलाया जाने लगा। इनके पुत्रों रणबीर और यश ने भी मिलाप को अपने खून पसीने से सींचा।

सन् 1938 में महात्मा हंसराज परलोक सिधार गए। इससे खुशहाल चन्दजी को दुःख हुआ। वह उन्हें अपना गुरु, पिता, संरक्षक और पथ प्रदर्शक मानते थे। उसी वर्ष दिसम्बर 1938 में हैदराबाद में आर्य समाज ने हिन्दुओं की रक्षा के लिए सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया। खुशहाल चन्दजी के प्रयत्न से बद्रीनाथ के शंकराचार्य और सिक्खों ने भी सत्याग्रह का समर्थन किया। इन्हें सत्याग्रह का छठा डिक्टेटर चुना गया। इन्होंने प्रेस से सम्पर्क साधा। प्रचार बढ़ा तो मलाया, बर्मा, थाईलैण्ड और अफ्रीका से भी स्वयं सेवकों के जत्थे आना तय हो गया। अन्त में निजाम को सत्याग्रहियों की मांगें स्वीकार करने पर विवश होना पड़ा।

अब इनका मन संन्यास आश्रम में प्रवेश करने का हो गया। पहली दिसम्बर 1949 ई. को स्वामी आत्मानन्दजी से संन्यास की दीक्षा प्राप्त की फिर सम्पूर्ण जीवन वेद के प्रचार–प्रसार में लगा दिया। देश–विदेश में वेदों का डंका बजाते रहे। उन्होंने बद्रीका आश्रम में जाकर योग साधना की। कई योगियों से मिलकर उन्होंने अपने को योग विद्या का विशेषज्ञ बना लिया। शेष जीवन में उन्होंने कभी विश्राम करने की नहीं सोची, लगातार वेद प्रचार में अपने को झोंके रखा। अन्त में 24 अक्टूबर 1977 ई. को नश्वर शरीर को त्याग कर ब्रह्मलीन हो गए।

इति शम्।

**दादा बाड़ी, कोटा**
**(राजस्थान)**

www.thearyasamaj.org



# परोपकारिणी सभा के उत्सव में पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा और पं. गुरुदत्त विद्यार्थी के ऐतिहासिक व्याख्यान

● मनमोहन कुमार आर्य

इस लेख में हम इतिहास के एक महत्वपूर्ण प्रसंग की चर्चा कर रहे हैं। 28 व 29 दिसम्बर सन् 1887 को परोपकारिणी सभा अजमेर का दो दिवसीय वार्षिकोत्सव था। इस अवसर पर वहाँ दयानन्द आश्रम का शिलान्यास भी किया जाना था जो कि सम्पन्न हुआ था। इस उत्सव में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी व सभी देशभक्त **क्रान्तिकारियों के आद्य गुरु पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, उदयपुर रिसासत के प्रमुख मंत्री महाकवि श्यामलदास, रक्तसाक्षी वीरवर पं. लेखराम, जीवनदानी शिक्षा शास्त्री महात्मा हंसराज, आजादी के आन्दोलन के प्रमुख स्तम्भ लाला लाजपतराय आदि पधारे हुए थे।** हमारा अनुमान है कि स्वामी श्रद्धानन्द पूर्व नाम महात्मा मुंशीराम भी इस आयोजन में उपस्थित रहे होंगे। उत्सव यद्यपि पूरा ही महत्वपूर्ण था परन्तु यहाँ पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा और पं. गुरुदत्त विद्यार्थी जी के उपदेशों ने आर्य जनता को मन्त्रमुग्ध व इन विद्वानों का भक्त बना दिया था। सभी लोग इन विद्वानों के प्रवचनों से हृदय की गहराइयों से प्रभावित हुए थे।

इस आयोजन में पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा जी ने **"आर्यावर्त्त की निर्धनता"** विषय पर अपना व्याख्यान दिया था। यह स्वाभाविक ही था कि उन्होंने इस भाषण में महर्षि दयानन्द जी का भावपूर्ण स्मरण किया होगा और देश की निर्धनता के लिए आलस्य व प्रमाद के साथ अज्ञान, अन्धविश्वास, मिथ्यापूजा–उपासना, सामाजिक कुरीतियों, वेद विरुद्ध आचरण, ऋषियों के ग्रन्थों के स्वाध्याय में प्रमाद आदि अनेकानेक कारणों को सम्मिलित किया होगा। यह दुःख का विषय है कि इस व्याख्यान को सुरक्षित नहीं रखा जा सका। काश, कि यह पूरा भाषण सुरक्षित किया जाता। उपलब्ध विवरण से यह ज्ञात होता है कि उनके भाषण का श्रोताओं पर गहरा प्रभाव हुआ था।

29 दिसम्बर को दयानन्द आश्रम का शिलान्यास यज्ञ के अनन्तर सम्पन्न किया गया। दोनों कार्य सम्पन्न होने के अनन्तर **पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी, श्री ज्वालासहाय तथा पण्डित गौरीशंकर जी ने कुछ वेद मन्त्रों का सस्वर पाठ किया जिसे सुनकर वहाँ उपस्थित सभी लोगों ने स्वयं को धन्य अनुभव किया था।** वेद मन्त्र के सस्वर पाठ की परम्परा मध्यकाल व उसके बाद अवरुद्ध प्रायः हो गई थी। आजकल भी यह सर्वत्र सुलभ नहीं है। वेद मन्त्रों का पाठ तो देवनागरी अक्षरों का जानकार कोई भी व्यक्ति कर सकता है परन्तु सस्वर पाठ तो लाखों में कुछ इने–गिने लोग ही जानते हैं। इसी प्रकार महावामदेवगान भी देश से सर्वत्र विलुप्त हो चुका है। कौन है जिसे इसकी कुछ भी चिन्ता है। चिन्ता तो तब हो जब किसी को इसका ध्यान हो। देश की केन्द्र व राज्यों की सरकारें आवश्यक व अनावश्यक कार्यों पर करोड़ों–अरबों रुपये खर्च करती हैं परन्तु परमात्मा की वाणी वेद के सस्वर पाठ आदि विधा के संरक्षण की ओर किसी का समुचित ध्यान नहीं है। यदि हम ठीक हैं तो शायद आर्य समाज के नेताओं का भी इस ओर समुचित ध्यान नहीं है।

उत्सव में रात्रि की सभा में पंडित गुरुदत्त जी का **"सत्य"** विषय पर व्याख्यान हुआ था। तत्कालीन पत्रों में पण्डित लेखराम द्वारा तैयार विवरण पढ़ने पर ज्ञात होता है कि **विद्वान् वक्ता ने जिस योग्यता व सुन्दरता से पवित्र वेद से सत्यवादी व असत्यवादी बनने तथा परमेश्वर से सम्बन्ध जोड़ने की विधि बताई उसे सुनकर अनेक हृदयों से सत्य का प्रकाश हुआ। वास्तव में वेद के एक मन्त्र 'अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि' पर ही पूरा व्याख्यान था। संस्कृत व्याकरण द्वारा उसका पदच्छेद करके उसके प्रत्येक शब्द से दिलों पर न्यारा–न्यारा प्रभाव पैदा किया गया। यह समय वास्तव में ऐसे ही सत्य के योग्य था। सच्चिदानन्द परमात्मा के ज्ञान व सत्य की महिमा का उस समय सबके हृदयों में आलोक हुआ।** पण्डित जी का 30 दिसम्बर को भी व्याख्यान हुआ। इस दिन आपको ज्वर था **तथापि आपने 'आर्य समाज' विषय पर प्रभावशाली भाषण दिया।**

लाला लाजपत राय पण्डित गुरुदत्त जी के सहपाठी व मित्र थे। दोनों ही आर्य समाज, लाहौर के सदस्य थे तथा दयानन्द व आर्य समाज के अनुयायी थे। आपने पंडित गुरुदत्त जी के दोनों व्याख्यान सुने और इन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा कि **'मैं इन दोनों भाषणों के समय वहाँ उपस्थित था और निश्चयपूर्वक कह सकता था कि उनमें से प्रथम एक अत्यन्त उच्चकोटि की विद्वता का व्याख्यान था। इस भाषण के विषय में उनको विशेष लगाव था क्योंकि उनको सब प्रकार की कुचालों व कुटिल नीतियों से घोर घृणा थी तथा वे जीवन की शुद्धता पर बहुत बल देते थे। इस भाषण ने श्रोताओं के हृदयों को छू लिया तथा कई भाइयों को पतन के गहरे गर्त्त में गिरने से बचाया। दूसरे भाषण में पण्डित जी का जोर इसलिए कम हो गया था कि उस समय से पूर्व ही पण्डित जी को ज्वर हो गया। तथापि अस्वस्थता उनके व्याख्यान में बाधक न बन सकी और उन्होंने निश्चित समय पर लगभग एक घण्टे तक व्याख्यान दिया।"**

स्वामी श्रद्धानन्द जी के उर्दू साप्ताहिक पत्र **'सद्धर्म प्रचारक'** से ज्ञात होता है कि पण्डित गुरुदत्त जी ने पेशावर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में 24 अक्टूबर, 1889 को **'वैदिक धर्म ही सद्धर्म है'** विषय पर बहुत सुन्दर व्याख्यान दिया था। रुग्णता के कारण उनकी आवाज ऊंची न थी। पं. लेखराम जी ने पण्डित गुरुदत्त जी के इस व्याख्यान का वर्णन करते हुए लिखा है–**'महर्षि दयानन्द का वेद भाष्य ही ठीक है। आर्य समाज कोई नवीन धर्म नहीं, प्राचीन है। पण्डित जी ने 3.30 बजे से 6.00 बजे तक मैक्समूलर आदि पाश्चात्य प्राध्यापकों के अनुवादों का बहुत योग्यता से खण्डन किया और सिद्ध कर दिया कि उनकी भूल का आधार बहुत कुछ सायण व महीधर हैं तथा कुछ स्थलों पर मैक्समूलर आदि विद्वान् इन दोनों के भाष्य समझने में भी असमर्थ हैं। पण्डित जी ने प्रमाणों से सिद्ध किया कि आर्य धर्म प्राचीन है।'** इस व्याख्यान में आर्य जगत की तत्कालीन प्रमुख हस्तियाँ पं. आर्यमुनि जी, पं. लेखराम व भक्तराज अमीचन्द जी आदि भी विद्यमान थीं। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने भी अपनी आत्मकथा **'कल्याण मार्ग का पथिक'** में पण्डित जी विषयक अपने रोचक एवं प्रेरक प्रसंग वर्णित करते हुए लिखा है कि महर्षि दयानन्द जी की मृत्यु पर जालन्धर में उनके द्वारा आयोजित एक सभा में पण्डित गुरुदत्त जी ने ऐसा प्रभावशाली भाषण दिया था कि जिसे सुनकर सभी श्रोता हतप्रभ रह गये थे। तब वहाँ उपस्थित 12 वकीलों में से कोई धन्यवाद के 4 शब्द कहने की स्थिति में नहीं था। एक अन्य स्थान पर उन्होंने लिखा कि मैंने अनुभव किया कि पं. गुरुदत्त ही एक ऐसी आत्मा हैं जिसके साथ मेरे आत्मिक भाव ऐक्य को प्राप्त हो सकते हैं। एक भेंट में गुरुदत्त जी ने भी स्वामी श्रद्धानन्द जी को कहा कि हम दोनों एक दूसरे को समझते हैं। स्वामी जी यह भी लिखते हैं कि पण्डित गुरुदत्त जी के थोड़े से सत्संग ने मेरी काया पलट दी। पण्डित जी की साक्षी मेरे लिए बहुत उत्तेजक हुई कि ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की प्रत्येक नई आवृत्ति करने पर नये भाव विदित होते हैं। अपनी डायरी में एक स्थान पर स्वामी श्रद्धानन्द लिखते हैं कि प्रिय गुरुदत्त से मिलकर मुझे नया धार्मिक बल मिलता है।

हम आशा करते हैं कि पाठक लेख में वर्णित दुर्लभ व्याख्यानों को पढ़कर प्रसन्नता का अनुभव करेंगे। हमने यह विवरण देश की जनता को परिचित कराने के लिए आर्य जगत के विख्यात विद्वान् प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी की विद्यार्थी जी पर पुस्तक से तैयार किया है इसके लिए हम उनका आभार व्यक्त करते हैं। हम आग्रह करते हैं कि पाठक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी की कृति **'मुनिवर पं. गुरुदत्त विद्यार्थी'** का स्वाध्याय कर लाभ उठायें।

पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985121

www.thearyasamaj.org



# आर्य समाज का पाँचवां नियम

● श्रीमती अनुजा शर्मा

**आर्य समाज के दस नियमों में सद् जीवन का सार भरा**
**इनका पालन हो जाये तो स्वर्ग बने सम्पूर्ण धरा**
**धर्म वही जो नित्य सत्य है, उसका ही आचरण करो।**
**जो असत्य है, लाभ लगे, तो भी ना उसे स्वीकार करो।।**
**तद्–अनुसार सब कर्म कीजिए, नियम–पाँच से बोध भरा।**

**आर्य समाज का पाँचवां नियम–सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।**

महर्षि दयानन्द जी ने अपने जीवन में कठोर तप एवं साधना करते हुए मत एवं संप्रदायों के अनेक ग्रन्थों का अध्ययन करने के उपरान्त सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए एक महान ग्रन्थ–सत्यार्थ प्रकाश की रचना की जो विश्व में अपने आप में अद्वितीय एवं सत्य असत्य का प्रकाश करने वाला एकमात्र अकाट्य ग्रन्थ है। सन् 1875 में स्वामी जी ने मानवता के कल्याण हेतु आर्य समाज की स्थापना की जिसके दस नियम बनाए।

महर्षि दयानन्द जी की बुद्धि तथा ज्ञान इतना विशाल था कि उसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि उनके द्वारा बनाए दस नियमों में समस्त प्राणियों के हित समाए हुए हैं तथा उनमें बदलाव की आवश्यकता आज तक महसूस नहीं हुई और न ही भविष्य में होगी।

आर्य समाज के दस नियमों में ज्ञान, सत्य और सेवा की जो बात स्वामी दयानन्द जी ने रखी वह प्रत्येक इंसान, हर मुल्क के लिए हर वक्त निहायत जरूरी है–इन्हीं कीमतों से इंसान, कौम और देश का जज्बा पैदा होता है। इन नियमों के पीछे ऋषि की जो दूर दृष्टि है उसे समझना और ग्रहण करना परम आवश्यक है।

पाँचवें नियम में सब काम धर्मानुसार करने का विधान है। यह नियम शिक्षा देता है कि कर्त्ता को प्रत्येक कार्य स्वयं विचार कर करना चाहिए तथा सही रूप से मनुष्य की परिभाषा भी यही है–

**"मत्वा कर्माणि सीव्यति सः मनुष्यः"**–अर्थात् मनुष्य वही कहलाता है, जो किसी कार्य को सोच समझकर करता है। उस कार्य को करने से पहले उसके सम्बन्ध में निश्चय कर लेना चाहिए कि वह कार्य धर्म कार्य ही है और उसमें असत्य का कोई अंश तो नहीं है। वैदिक साहित्य में सत्य और धर्म पर्यायवाची शब्द हैं। महाभारत में धर्म की परिभाषा इस प्रकार दी है–**"स्वकर्म वर्तित्वम्"–अर्थात् अपने काम को निष्ठापूर्वक करना ही धर्म है।**

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने धर्म की परिभाषा पूछने पर कहा–जो सत्य और न्याय से युक्त है, जिसमें पक्षपात का लेशमात्र भी अंश नहीं है तथा जो वेद आज्ञा के अनुकूल आचरण करता है उसे मैं धर्म कहता हूँ। **"आर्य उद्देश्य रत्नमाला"** में धर्म को इस प्रकार परिभाषित किया गया है जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपात रहित, न्यायपूर्ण सर्वहित करना है जो कि प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से परीक्षित और वेदों में वर्णित होने से सब मनुष्यों के लिए यही एक मानने योग्य है, उसे धर्म कहते हैं।

दयानन्द द्वारा प्रतिपादित धर्म किसी संकीर्ण विचारधारा, कर्मकाण्ड तथा मतवाद का पर्याय नहीं है। धर्म शब्द का कोई अन्य पर्याय किसी भाषा में उपलब्ध नहीं होता। यही कारण है कि भारत में प्रचलित सभी प्रमुख भाषाओं में धर्म के लिए कोई शब्द नहीं है।

धर्म संस्कृत के **"धृ"** धातु से बना है जिसका अर्थ है **"धारण करने योग्य"**। यही बात महाभारत में **"धारणात् धर्मः"** कहकर उन तत्वों की समष्टि को धर्म कहा है जिन्हें ग्रहण कर मनुष्य में मानवता का संचार होता है। सच तो यह है कि दयानन्द प्रतिपादित वैदिक धर्म ही मानव धर्म का पर्याय है। उसे ही सार्वजनिक सार्वभौमिक (हमेशा से था और होगा) तथा सार्वकालिक धर्म कहा गया है।

आर्य समाज के इस नियम के अनुसार मनुष्य को अपने कर्मों को करते समय यह विचार अवश्य करना चाहिए कि जो काम वह करने जा रहा है वह धर्मयुक्त है या उसमें अधर्म का समावेश है। धर्म और अधर्म की कसौटी उन्होंने सत्य और असत्य को बताया है। जो सत्य है वही धर्म है। इसके प्रतिकूल असत्य आचरण अधर्म है जो त्यागने (छोड़ने) योग्य है। संस्कृत वाङ्मय में धर्म की परिभाषा इस प्रकार की गई है–

**"वस्तु स्वभावो धर्मः"**–अर्थात् किसी भी वस्तु, व्यक्ति या पदार्थ का स्वभाव ही धर्म है। इस वैज्ञानिक और तर्कपूर्ण परिभाषा को मान्यता देना जरूरी है। जैसे अग्नि का धर्म जलाना, पानी का धर्म ठण्डा करना, वायु का धर्म प्रवाहित होना माना गया है। सच्चाई यह है कि लोगों ने विभिन्न मत–मतान्तरों, पूजा–उपासना पद्धतियों, मनुष्य को विभाजित करने वाले कर्मकाण्डों को धर्म मान लिया है। स्वामी दयानन्द ने वैदिक सिद्धान्तों पर आधारित व्यष्टि और समष्टि धर्म की परिभाषा की है। सर्वप्रथम उन्होंने मनुष्य को शरीर धर्म का पालन करने का परामर्श किया। उन्होंने स्वस्थ शरीर में "स्वस्थ मन" के सिद्धान्त का निरूपण किया और इन्द्रिय, मन, बुद्धि तथा अन्तर आत्मा को पवित्र और सबल बनाने की बात कही।

कालिदास के शब्दों में–

**"शरीरमाद्यम् खलु धर्म साधनम्"**–अर्थात् धर्म रूपी साधना को पूरा करने के लिए सबसे पहला साधन शरीर ही है। धर्म के संबंध में **"मनुस्मृति"** में यों तो अनेक सुन्दर उक्तियाँ मिलती हैं परन्तु महर्षि दयानन्द ने मानव शास्त्र में वर्णित धर्म को सभी प्राणियों के लिए स्वीकार किया है। उनके मतानुसार–**"वेदाऽखिलो धर्म मूलम्"**–अर्थात् इस धर्म का मूल वेद ही है। इस धर्म का ज्ञान श्रुति, स्मृति, सदाचार तथा अपनी आत्मा की साक्षी से होता है। इस दृष्टि से दयानन्द के चिंतन की वैज्ञानिकता स्पष्ट रूप से उजागर होती है। वे धर्म को मात्र विश्वास तथा आस्था का पुंज ही नहीं मानते अपितु उसको विवेक बुद्धि तथा तर्क की कसौटी पर कसने के लिए कहते हैं।

मनु के शब्दों में जो तर्क के द्वारा खोजा जाता है वही धर्म है। वस्तुतः मनुष्य के प्रत्येक आचार कर्म तथा उसकी समस्त जीवन चर्या के लिए धर्म–अधर्म और सत्य–असत्य के विवेक की अवधारणा का प्रतिपादन कर ऋषि दयानन्द ने एक शाश्वत सत्य का निरूपण किया है। महर्षि दयानन्द की यह स्पष्ट घोषणा है कि धर्म एक ही होता है अनेक नहीं,

**"बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताए।**
**काम बिगाड़े आपना जग में होत हँसाए।।"**

अब मैं धर्म के संदर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को प्रस्तुत करने जा रही हूँ–

★ धर्म–कर्त्तव्य पालन को कहते हैं अर्थात् जो धारण करने योग्य है।

★ धर्म नैतिकता (Morality) को भी कहते हैं।

★ धर्म के नियम सर्वमान्य (Universal) और वैज्ञानिक (Scientific) हैं। अर्थात् धर्म हमेशा विज्ञान के नियमों का पालन करता है।

★ धर्म के सिद्धान्त (नियम) किसी मनुष्य द्वारा नहीं बनाए जाते बल्कि प्रकृति द्वारा स्वयं निर्धारित हैं।

जैसे आग का धर्म–जलाना,
पानी का धर्म–ठण्डा करना,
वायु का धर्म–जीवन को प्राण देना,
सूर्य का धर्म–प्रकाश देना, ताप देना आदि।

★ मनुष्य द्वारा बनाए नियम आदि को मत, पंथ या संप्रदाय कहते हैं।

★ धर्म की पालना करने से आत्मिक शक्ति प्राप्त होती है।

★ धर्म की पालना करने से सामाजिक न्याय व्यवस्था स्थिर होती है।

★ धर्म संकीर्णता और घृणा पैदा नहीं करता।

★ धर्मपूर्वक कार्य करने के विभिन्न स्वरूप हैं जैसे व्यक्तिगत, पारिवारिक, राष्ट्रीय और व्यापारिक।

उदाहरण के लिए **व्यक्तिगत धर्म** उसे कहते हैं–

जिसमें एक मानव दूसरे मानव से प्रेमपूर्वक व्यवहार करे और एक दूसरे की सुख सुविधा का ध्यान रखे।

★ **पारिवारिक धर्मः** माता पिता, पुत्र, पत्नी, भाई–बहन तथा परिवार के दूसरे सभी सदस्यों की सुख शान्ति, समृद्धि उत्पन्न करने के लिए जो यत्न किये जायें, उन्हें **पारिवारिक धर्म** कहते हैं।

★ **सामाजिक धर्मः** मनुष्य जिस समाज में रहे उसकी उन्नति, ख्याति आदि जैसे अनेकों कर्त्तव्यों की पालना करने को **सामाजिक धर्म** कहते हैं।

★ **राष्ट्रीय धर्मः** राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों की पालना करने को, जिससे राष्ट्र–प्रेम, समृद्धि और रक्षा आदि बढ़े उसे **राष्ट्र धर्म** कहते हैं।

★ **व्यापारिक धर्मः** व्यापार में ईमानदारी से एक दूसरे के हित के लिये कर्त्तव्यों की पालना करने को **व्यापारिक धर्म** कहते हैं।

★ **विद्यार्थी धर्मः** लगन व मेहनत से स्वाध्याय और अपनी शारीरिक उन्नति करना तथा माता–पिता आचार्य के निर्देशों की पालना करने को **छात्र धर्म** कहते हैं।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org



# परस्पर सहयोग से सुगृहस्थी बन शतवर्षीय आयु पावें

● डॉ. अशोक आर्य

आज का युग स्वार्थ का युग है, एक–दूसरे को नीचा दिखाने का युग है। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को दूसरे से आगे दिखाना चाहता है। आगे जाने के लिए पुरुषार्थ की आवश्यकता होती है। बिना पुरुषार्थ के कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता। पुरुषार्थ भी ऐसा चाहिए जो सद्मार्ग पर ले जाने वाला हो। दूसरे से आगे जाने के लिए दूसरे के मार्ग को ही काट देना पुरुषार्थ नहीं है अपितु ऐसा तेज गति से चलना कि दूसरा पीछे रह जावे, ऐसा पुरुषार्थ ही वास्तव में पुरुषार्थ की श्रेणी में आता है। आज का व्यक्ति दूसरे से आगे निकलने के लिए पुरुषार्थ तो करता है किंतु उस का यह पुरुषार्थ निर्माणात्मक नहीं होता, विनाशात्मक होता है। आज स्वयं को ऊंचा दिखाने के लिए यदि दूसरे को समूल ही नष्ट करना पड़े तो किसी को ऐसा करने में कुछ भी शर्म अनुभव नहीं होती। यह आगे निकलने का नहीं विनाश का मार्ग है। इस मार्ग पर चलने से पूर्व कम से कम दस बार सोचना चाहिए कि जो मैं करने जा रहा हूँ, क्या वह अच्छा भी है या नहीं। उसके परिणाम का भी यदि चिंतन किया जावे तो ऐसे भयंकर मार्ग पर चलने से बचा जा सकता है, जिसका अंत विनाशकारी होने वाला था। वेद कहता है कि परस्पर मिलकर चलो, परस्पर सहयोग से चलो, सह अस्तित्व की भावना से कर्म में लगो, सफलता मिलेगी। यजुर्वेद इस संबंध में इस प्रकार प्रकाश डालता है:–

**अग्ने गृहपते सुग्रहपति,**

**स्त्वयागनेऽहं मयाग्ने गृहपतिना भूयासम,**

**सुग्रहपतिस्त्वं मयाग्ने गृहपतिना भूयाः।**

**अस्थूरी णो गार्हपत्यानी सन्तु**

**शत हिमा:सूर्यस्याव्रतमंवावरते।। यजुर्वेद २.२७।।**

यदि संक्षेप में कहें तो हम कह सकते हैं कि यह मंत्र हमें उपदेश कर रहा है कि हे अग्नि अर्थात् गृहपति तुम्हारी सहायता से मैं सुयोग्य गृहपति बनूँ, तू भी मुझ गृहपति से सुयोग्य गृहपति हो। हम दोनों का गृहस्वामित्व परस्पर संबंध हो। जिस प्रकार सूर्य एक नियमित क्रम में चलता है, उस प्रकार मैं भी सौ वर्ष तक नियमित क्रम वाला होऊं।

संक्षेप में मंत्र को समझने के पश्चात् आओ हम अब इस मंत्र पर विस्तार से चिंतन करें। यह मंत्र परिवार को संगठन की डोर में बांधने का उपदेश देता है। मंत्र गृह दंपति को उपदेश देता है कि परिवार तब ही सुदृढ़ होगा, यदि तुम दोनों मिलकर रहो, प्रत्येक कार्य सदा मिलकर करो, एक–दूसरे पर विश्वास करो, एक–दूसरे को सहयोग दो, पूर्ण सौहार्द भाव ही परिजनों को साथ–साथ रख सकता है। इसलिए हे दंपति! सदा मिलकर रहो, मिलकर कार्य करो तथा सौहार्द को कभी नष्ट न होने दो।

''अस्थूरी णो गार्हपत्यानी'' पारिवारिक जीवन के लिए स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाना चाहिए। एकनिष्ठ या एकांगी व्यक्ति को स्थूरी कहते है। जब सम्मिलित हो जाते हैं, एक–दूसरे से सम्बंध हो जाते हैं अथवा समन्वित हो कार्य सम्पन्न करते हैं तो इसे अस्थूरी कहते हैं। परिवार एक समन्वित जीवन का नाम है, परिवार एक–दूसरे से जुड़कर कार्यशील होने का नाम है, परिवार एक अन्योनाश्रित होकर चलने का नाम है। इस परिवार के भी रथ के ही समान दो पहिये होते हैं। यह दो पहिये हैं पति तथा पत्नी। पति और पत्नी से मिलकर ही परिवार की कल्पना की जा सकती है। बिना पति के अथवा बिना पत्नी के परिवार बन ही नहीं सकता। अतः परिवार में जब तक यह पति और पत्नी रूपी दो पहिये एक–दूसरे की सहायता करते हुए गतिशील हैं, जब तक ही रथ के समान परिवार ठीक–ठीक कार्य करता है, ठीक से गतिशील है किंतु ज्यों ही दोनों में से एक लड़खड़ा गया तो यह परिवार भी उस रथ के समान डोलने लगता है, जिस एक पहिये में किंचित सा दोष आने पर रथ भी डावांडोल हो जाता है। अतः परिवार रूपी रथ को चलाने के लिए पति व पत्नी में सौहार्द का होना आवश्यक है।

आज परिवार टूट रहे हैं, परिवारों में लड़ाई–झगड़ा, कलह–क्लेश बढ़ते जा रहे हैं। पता नहीं कब पत्नी घर से भाग कर अपने मायके जा बैठे, पता नहीं पत्नी भाग कर अपनी जीवन लीला ही समाप्त कर ले। पत्नी ही नहीं, आज पति भी दयनीय बनकर जी रहे हैं। पति भी सम्मान की रक्षा के लिए घर से भागने लगे हैं तथा आत्महत्या भी करने लगे हैं। इस का क्या कारण है? दोनों में अथवा दोनों में से किसी एक में अहम की भावना अधिक है। यह अहम ही है जो परिवार के दोनों मुखियाओं को साथ–साथ नहीं चलने देता। यह अहम ही है जो परिवार में अनेक प्रकार के झगड़ों का जनक होता है। इस अहम का ही परिणाम होता है कि परिवार की साख पूरे क्षेत्र में गिर जाती है। यह गिरती साख ही परिजनों को विनाश की ओर ले जाती है। इसका परिणाम ही होता है कि परिवार का कोई व्यक्ति किसी भयंकर रोग से ग्रसित हो जाता है तथा वह बार–बार अपनी जीवन लीला समाप्त करने का प्रयास करता है। इस प्रकार जिस परिवार ने परिवार का नव निर्माण करना था, वह परिवार निर्माण तो क्या विनाश का कारण बन रहा है। इसलिए परिवार के दोनों स्तम्भ पति व पत्नी को मिलकर चलना, सहानुभूति पूर्वक चलना तथा एक–दूसरे की भावनाओं का सत्कार करना आवश्यक है। ऐसा होने पर ही परिवार सच्चे अर्थों में परिवार बन पावेगा।

इससे यह स्पष्ट होता है कि जब पति व पत्नी दोनों मिलकर इस गृहस्थ रूपी रथ को चलावेंगे तो यह रथ ठीक से चलेगा। यदि दोनों में से एक भी कर्तव्यच्युत हुआ, निष्क्रिय हुआ तो गृहस्थ की यह गाड़ी डोल जावेगी, रुक जावेगी, नष्ट हो जावेगी। इसलिए पति–पत्नी को परस्पर सामंजस्य बनाकर चलने की आवश्यकता, एक–दूसरे के प्रति सहानुभूति व संवेदना रखने की आवश्यकता तथा एक–दूसरे के प्रति समन्वय बनाकर सम्मुन्नति की दिशा में बढ़ने की आवश्यकता को इस मंत्र में बड़े ही सरल ढंग से समझाया गया है। जिस परिवार में ये गुण होंगे, वह परिवार एक सफल परिवार होगा, एक सम्मुन्नत परिवार होगा। धन धान्य से भरपूर होगा वह परिवार, इस परिवार की निरंतर श्रीवृद्धि होती चली जावेगी। ऐसे परिवार की ख्याति इतनी बढ़ेगी कि जब भी कहीं किसी अच्छाई का उदाहरण देना होगा तो इस परिवार का नाम सर्वोपरि होगा तथा इस परिवार का उदाहरण देकर अन्य लोग स्वयं को सन्मार्ग पर चलाने की प्रेरणा करेंगे।

मंत्र के दूसरे खंड में प्रभु से प्रार्थना की गई है कि हे प्रभु! यज्ञ हमारी उन्नति करे। सब जानते हैं कि यज्ञ से रोगों का नाश होता है, पर्यावरण शुद्ध होता है इसलिए न केवल यज्ञ द्वारा उन्नति की मांग करते हुए यज्ञ को प्रतिष्ठित करने की कामना की गई है, अपितु वेद मंत्र के इस आशय को गीता के अध्याय तीन के श्लोक ११ में इस प्रकार व्यक्त किया गया है :

**देवान भावयातानेन, ते देवा भावयन्तु वः।**

**परस्परं भावयन्तः, श्रेय परमवाप्स्यथ।। गीता ३.११।।**

इसका भाव यह है कि मनुष्य यज्ञ के द्वारा देवों को प्रसन्न करे। देव किसे कहते हैं? जो दे उसे देव कहते हैं। इसलिए जब हम देवों को प्रसन्न करने के लिए यज्ञ करते हैं तो देव प्रसन्न होकर प्रतिफल स्वरूप हमारे लिए सुख–समृद्धि की वर्षा कर हमें भी प्रसन्न करते हैं। जब देव भी प्रसन्न हैं तथा मनुष्य भी प्रसन्न हैं तो दोनों की प्रसन्नता से दोनों के पास ही धन–धान्य के अप्रार भंडार होने से सुखों व श्री की वृद्धि होती है। जिसे हम पाने के लिए आजीवन भटकते हैं, वह सब हमें यज्ञ से ही मिल सकता है तो फिर हम इसे अपने जीवन का अंग क्यों न बनावें।

इस प्रकार मंत्र के दोनों भागों में सुखी जीवन व्यतीत करते हुए शतवर्षीय आयु की कामना की गई है। जब पति–पत्नी आपस में समन्वय बनाते हुए मिलजुल कर रहेंगे तथा यज्ञमय जीवन बनाते हुए प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ करेंगे तो जीवन में सदैव सुख ही सुख मिलेंगे तथा यज्ञ करेंगे तो सर्वत्र सुख के साथ ही शांति भी मिलेगी। जब सुख, शांति, समृद्धि व श्री के स्वामी बन गए तो चिंता रहित जीवन तो लंबा होगा ही। इस प्रकार आयु भी लंबी होगी तथा शत ही नहीं इससे भी अधिक आयु जीवन जीने का अवसर मिलेगा। इसे पाने के लिए हमें आपस में सामंजस्य व सहानुभूति के साथ एक–दूसरे के सहयोग की इच्छा शक्ति पैदा कर यज्ञमय जीवन बनाकर यज्ञों को अपनाना आवश्यक है।

**१०४–शिप्रा अपार्टमेंट,**
**कौशाम्बी, जिला गाजियाबाद,**
**उ.प्र.–२१००१०**
**चलवार्ता–09718528068**

www.thearyasamaj.org



☞ पृष्ठ 02 का शेष

# मानव जीवन गाथा...

**सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।**
**अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो**
**यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।**

सत्य से मिलता है वह आत्मा; तप से, सम्यक् ज्ञान से, ब्रह्मचर्य से; यति लोग अपने दोषों को नष्ट करके उस शुभ्र ज्योतिवाले को देखते हैं जो शरीर में रहता है।

अब तक मैंने केवल यह बताया कि वह सत्य जिससे आत्मा के दर्शन होते हैं, क्या है?

अब तप की बात सुनिये! तप वह साधन है, जिसके बिना संसार का कोई कार्य होता नहीं। प्रतिदिन हम भोजन खाते हैं। दिन में दो बार और तीन बार खाते हैं। क्या आपने कभी सोचा कि इस रोटी को बनाने में कितने लोगों को कितना तप करना पड़ता है? पहले कृषक क्षेत्र को बनाता है, उसमें हल चलाता है, तब उसमें बीज डालके उसे पानी देता है। कई दिनों के पश्चात् बीज फूटता है। छोटे–छोटे पत्ते निकलते हैं। धीरे–धीरे वे बड़े होते हैं। तब पक्षियों से, पशुओं से, कितने ही लोगों से इनकी रक्षा करनी पड़ती है। नौ–दस मास के पश्चात् अन्न पकता है। उसे काटा जाता है। गेहूँ की मण्डियों में आता है, दुकानों में आता है, चक्कियों में पीसा जाता है, आटा बनता है। तब उसे गूँधा जाता है। परन्तु इतना–कुछ करने से रोटी नहीं बन जाती। रोटी बेलने के लिए लकड़ी या पत्थर का एक स्वच्छ चकला चाहिए। यह भी स्वयं नहीं बन गया। कितने ही लोगों को इसके लिए परिश्रम करना पड़ता है। परन्तु इतने से भी रोटी तो नहीं बन गई! इस चकले के अतिरिक्त बेलन भी चाहिए; उसे बनाने के लिए कुछ और लोगों ने कार्य किया। परन्तु अब भी रोटी नहीं बनी। उसे पकाने के लिए एक तवा चाहिए। तवे के लिए लोहा चाहिए। लोहे को प्राप्त करने के लिए पृथिवी की गहराई में जाना पड़ा। फिर लकड़ी अथवा कोयला चाहिए। इतना–कुछ हुआ, तब जाकर रोटी बनी, आपने खाई। छः घण्टे के पश्चात् फिर खाने की आवश्यकता अनुभव होने लगी। तप के बिना, परिश्रम के बिना, कुछ होता नहीं। ईश्वर ने भी इस सृष्टि को रचा तो तप का आश्रय लेकर। इतनी आवश्यक वस्तु है यह। श्वेताश्वतर उपनिषद् में आत्मदर्शन के दोनों साधन बताये गये हैं–एक आत्मा का ज्ञान, दूसरा तप। और यह तप, जैसा कि मैंने आपको पिछले एक भाषण में बताया, यह है कि मनुष्य अपने उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए, प्रत्येक प्रकार की आपत्तियों, विपत्तियों, कष्टों, विरोधों और निन्दा को सहन करे, रुके नहीं, आगे बढ़ता जाए। जिन लोगों के जीवन में तप नहीं, वे किसी भी समय गिर सकते हैं। केवल तप की भावना से कार्य करनेवाले लोग ही आगे बढ़ते और सफल होते हैं। ऐसे ही लोगों के सम्बन्ध में उर्दू के प्रसिद्ध कवि श्री लालचन्द 'फ़लक' ने एक बार कहा था–

**आग में पड़कर भी सोने की दमक जाती नहीं।**
**काट देने पर भी हीरे की चमक जाती नहीं।।**
**सिल पे घिस देने से भी जाती नहीं चन्दन की बू।**
**फूल की मिट्टी में मिलकर भी महक जाती नहीं।।**
**रंज में आता नहीं नेकों की पेशानी पे बल।**
**धूप की तेजी में सब्ज़े की लहक जाती नहीं।।**

ऋषि दयानन्द का कितना विरोध हुआ? कितनी गालियाँ उन्हें दी गईं? कितनी निन्दा की गई? परन्तु वे किसी से भी डरे नहीं। वे जोधपुर को जा रहे थे तो किसी ने कहा, "महर्षि, वहाँ मत जाओ। राजस्थान की मरुभूमि में दया नहीं, ममता नहीं। वहाँ रहने वाले का हृदय पत्थर के समान कठोर है। उनका क्रोध धूप की भाँति जला देनेवाला है।" ऋषि ने कहा, "होंगी ये बातें। परन्तु मुझे किसका भय है? मैं डरनेवाले दिन उत्पन्न नहीं हुआ। यदि कोई मेरे शरीर को जीवित जला दे, यदि मेरी अँगुलियों में तेल–लगे कपड़ों को बाँध के आग लगा दे, तो भी मार्ग में से डगमगानेवाला नहीं।"

**देख कर जो सख्त तकलीफ़ों को घबराते नहीं।**
**काम कितना ही कठिन हो पर जो अकुलाते नहीं।।**
**भाग्य पर रह के भी जो पीछे में पछताते नहीं।**
**भीड़ पड़ने पर भी चंचलता जो दिखलाते नहीं।।**
**होते हैं इक आन में उनके समागम सब भले।**
**सब जगह सब काम में रहते हैं वो फूले फले।।**

ऐसे लोगों के लिए हटने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। वे कच्ची मिट्टी के बने हुए नहीं होते। तप की अग्नि में तपी हुई पक्की ईंटों–जैसे बने होते हैं वे। तप के बिना यह कार्य होता नहीं। जिन घरों में तप की भावना नहीं, वहाँ प्रतिदिन लड़ाई होती रहती है। किसी ने धीरे से थप्पड़ लगा दिया, बस मच गया महाभारत। क्रोध उनको आता है जिनमें तप की भावना नहीं, जिनमें सहनशक्ति नहीं।

और सुनो, एक रहस्य की बात बताता हूँ। आप कितना भी धर्म कीजिये, पुण्य कीजिये, यज्ञ और दान कीजिये, जैसे ही आप एक बार क्रोध करते हैं, वैसे ही वह सब समाप्त हो जाता है। जला देता है सब–कुछ। बिल्कुल ऐसी बात है यह, जैसे आप एक कमरे को बहुत अच्छी प्रकार झाड़–पोंछकर स्वच्छ कर दें, दीवारों पर सुन्दर चित्र लगा दें, द्वारों पर नीले–पीले पर्दे लगा दें, कई प्रकार के खिलौने, कई प्रकार की वस्तुएँ, बहुत उत्तम प्रकार का फर्नीचर उसमें रख दें, और सब–कुछ करने के पश्चात् पेट्रोल छिड़ककर अग्नि लगा दें। क्या होगा? सब–कुछ राख हो जायेगा। यही बात क्रोध की है। आपकी पूजा, जप, तप, योग–साधन, स्वाध्याय, सब व्यर्थ हो जायेंगे, यदि आप सहनशीलता से क्रोध को वश में नहीं कर सकते। इस सहनशक्ति को उत्पन्न करना ही तप है।

**क्रमशः....**

☞ पृष्ठ 07 का शेष

# आर्य समाज का...

★ **आचार्य धर्मः** निस्वार्थ भाव से लगन व मेहनत से विद्यार्थी के जीवन का सम्पूर्ण विकास करने को ही **आचार्य धर्म** कहते हैं।

★ **ब्राह्मण धर्मः** सत्य विद्याओं का पढ़ना और पढ़ाना, यज्ञ करना और कराना, सम्मान देना, दान लेना और देना है। अध्यापकगण **ब्राह्मण धर्म** पालन करते हैं।

★ **क्षत्रिय धर्मः** निर्बल, निर्धन, ब्राह्मण, देश, जाति की रक्षा करना ही **क्षत्रिय धर्म** कहलाता है। सैनिक क्षत्रिय धर्म का पालन करते हैं।

★ **वैश्य धर्मः** अपने देश को व्यापार द्वारा लाभ कराना और अन्न आदि के अभाव की पूर्ति करने को **वैश्य धर्म** कहते हैं। सभी व्यापार, सभी प्रकार के लेन देन सम्बन्धी ईमानदारी परस्पर विश्वास से कर्त्तव्य पालन करने को भी वैश्य धर्म कहते हैं।

★ **शूद्र धर्मः** समाज की सच्चे मन से सेवा करना, **शूद्र धर्म** है।

★ **मानव धर्मः** एक मानव का दूसरे मानव को सुखी और उन्नति पर ले जाने के लिए जिन कर्तव्यों का पालन किया जाये, वही **मानव धर्म या मानवता** कहलाता है।

★ धर्म हमेशा सुख, समृद्धि, आत्मिक बल व शान्ति प्रदान करता है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट हो गया कि आर्य समाज के पाँचवें नियम के अनुसार धर्मपूर्वक किए गए कार्यों का लाभ प्राणिमात्र के हित में ही होगा और ऐसा करने वाला व्यक्ति धार्मिक व सच्चा इंसान ही कहलाएगा। इस संदर्भ को मैं एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करना चाहूँगी। एक किसान जो अन्न आदि की खेती करता है और अर्थोपार्जन कर अपने परिवार का पालन पोषण करता है। दूसरा व्यक्ति तम्बाकू की खेती करता है और अर्थोपार्जन कर अपने परिवार का पालन करता है। यद्यपि दोनों का उद्देश्य तो एक ही है परन्तु कार्य में भिन्नता दिखाई देती है। एक के कार्य से उसका अपना और संसार का लाभ होता है वह किसान है और दूसरे के कार्य से केवल उसका अपना ही लाभ होता है परन्तु संसार की हानि होती है। तब हम यह कह सकते हैं कि किसान का कार्य बहुत सोचा समझा और धर्मानुसार कार्य है। यह आर्य समाज के पाँचवें नियम को पूर्ण रूप से सिद्ध करता है। ठीक इसी प्रकार से हमें भी हर कार्य को सोच–समझ कर ही करना चाहिए। कहीं भी स्वार्थ की भावना नहीं होनी चाहिए। जिस किसी भी कार्य को करें परार्थ भाव से ही करें। वसुधैव कुटुम्बकम् की पवित्र भावना हम सब के कार्य के साथ जुड़ी हुई हो तभी हम आर्य समाज के पाँचवें नियम को सार्थक करते हुए और अपने अंदर इन्सानियत का भाव लाते हुए महर्षि दयानन्द के सपनों को साकार कर पाएँगे।

अन्त में, मैं यही कहना चाहूँगी–

**अँधेरा भागता, जब सूर्य और छविमान होता है,**
**शिलाएँ सर झुकाती हैं, जब तूफ़ान उठता है।**
**तुम क्या पूछते हो, विश्व का इतिहास साक्षी है,**
**सब गिर पड़ते हैं, जब इंसान उठता है।।**

**प्राचार्या,**
**डी.ए.वी. मॉडल स्कूल**
**सैक्टर–15ए, चण्डीगढ़**

www.thearyasamaj.org



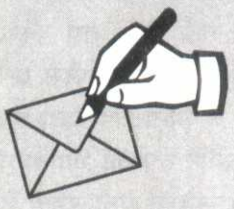

# पत्र/कविता

## बात काम की अब सुनो, जो चाहो कल्याण

नरेन्द्र मोदी जी करो, देश धर्म का ध्यान।
बनो शिवा, प्रताप तुम, नेता चतुर सुजान।।
नेता चतुर सुजान, वीर बलवान बनो तुम।
बिस्मिल, शेखर बनो, देश को शान बनो तुम।।
वैदिक पथ के पथिक! जाग जाओ हे नेता।
पाओ तुम सम्मान, विश्व में वीर विजेता।।

दौड़ रहा है दौड़ में, यह सारा संसार।
आपा धापी मच रही, है सब दुखी अपार।।
हैं सब दुखी अपार, देखलो हे बलधारी।
भोग रही है कष्ट, भयंकर दुनिया सारी।।
इस हालत में सुनो! जगत में वही बचेगा।
राम, कृष्ण की तरह, धर्म की डगर चलेगा।।

खतरनाक है विश्व में अमरीका की चाल।
अमरीका है स्वार्थी, रखना इसका ख्याल।।
रखना इसका ख्याल, रहा है कर मन–मानी।
ठीक तरह लो जान, वीर! इसकी शैतानी।।
दुष्ट पाक की मदद, रात–दिन यह करता है।
चलता गन्दी चाल, न ईश्वर से डरता है।

पापी पाकिस्तान का मत करना विश्वास।
मत करना शैतान से अच्छाई की आस।।
अच्छाई की आस, न करना हे तप धारी।
जान गई है इसे, आज यह दुनियां सारी।।
चाल बाज है चीन, हमारा भारी दुश्मन।
हत्यारा चांहाल, कुचाली जलित कृपण।।

जो आजमाए शत्रुपर, करता है विश्वास।
धोखा खाता है बड़ा, महा मड़ वह खास।।
महा मूढ वह खास, अन्त में पछताता है।
सहता है अपमान, जहां भी वह जाता है।।
हिम्मत से लो काम, सफलता तुम पाओगे
देश भक्त बलवान, वीर तुम कहलाओगे।।

बात काम की अब सुनो। यदि चाहो कल्याण।
देश कारो मजबूत तुम, विक्रमादित्य समान।।
विक्रमादित्य समान, बनो योद्धा नर बंका।
निर्भय हो, दो बजा, विजय का जग में डंका।।
पाओगे सम्मान, झुकेगी दुनिया सारी।
गाएंगे यश गान, जगत के सब नर–नारी।।

पं. नन्दलाल निर्भय भजनोपदेशक
ग्राम पो. बहीन जनपद पलवल (हरि.)
दूरभाष – 09813845774

## मेला चांदापुर विषयक दो जिज्ञासाओं का समाधान असम्बद्ध बातों से तो कैसे होगा?

'परोपकारी' के अक्टूबर (द्वितीय) 2015 अंक में प्रा. राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' ने मेला चांदापुर प्रसंग में लिखा है–"मुसलमानों ने ऋषि के सामने प्रस्ताव रखा कि हम और आप दोनों मिलकर गोरे पादरियों से टक्कर लें। परस्पर की बातचीत फिर हो जायेगी, पहले इनको हराया जाये।" (पृष्ठ संख्या–13)

इस लेख को पढ़कर मैंने ऋषि दयानन्द के उपलब्ध पांच प्रमुख–प्रामाणिक जीवन चरित्र (1. पं. लेखराम जी संगृहीत, 2. पं. लक्ष्मण जी आर्योपदेशक लिखित, 3. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय जी संगृहीत 4. हरबिलास सारडा जी कृत, और 5. डॉ. भवानीलाल भारतीय रचित) में दिए गए मेला चांदापुर विषयक वृत्तान्त पढ़े। इनमें से किसी भी ग्रन्थ में ऋषि दयानन्द से उपर्युक्त प्रस्ताव रखने वाले लोग 'मुसलमान' थे, ऐसा नहीं लिखा है, प्रत्युत इन जीवन चरित्रों में इस प्रस्ताव के रखने वालों के लिए क्रमशः –1. 'कुछ सज्जनों ने', 2. कई लोगों ने, 3. कुछ लोग, 4 Some people, ('सम पीपल' अर्थात् कुछ लोग), तथा 5. कुछ लोगों–इन शब्दों का प्रयोग किया गया है। यह प्रस्ताव 'मुसलमानों' ने ऋषि के समक्ष रखा था, ऐसा इन में से किसी भी जीवनचरित्र में नहीं लिखा गया है। 'मेला चांदापुर' (अथवा 'सत्यधर्मविचार') के वर्तमान संस्करणों में भी कहीं यह नहीं लिखा गया है कि ऋषि से यह प्रस्ताव 'मुसलमानों' ने रखा था।

अतः मैंने 'वैदिक पथ' (नवम्बर 2015) आदि के माध्यम से जिज्ञासा प्रकट की थी कि जिन लोगों ने ऋषि के समक्ष उपयुक्त प्रस्ताव रखा था, वे सब 'मुसलमान' थे–ऐसा 'परोपकारी' में प्रकाशित अपने लेख में किस ऐतिहासिक प्रमाण के आधार पर लिखा गया है? यह मेरी जिज्ञासा थी और है। मैंने ऐसा तो कहीं पर भी नहीं लिखा है कि 'परोपकारी' के लेख में प्रकाशित यह बात मिथ्या है। केवल प्रमाण की जिज्ञासा की है। फिर भी प्रमाण प्रस्तुत न कर इस विषय में विभिन्न असम्बद्ध बातें लिखी गईं और आज पर्यन्त लिखी जा रही हैं। जैसे कि, 'परोपकारी' के अन्तिम (मई द्वितीय 2016) अंक में पृष्ठ 8 पर पुनः लेखराम जी के 'एक ग्रन्थ' (ग्रन्थ का नाम भी नहीं लिखा) का उल्लेख कर लेखक ने अपनी बात को ठीक बताने का प्रयास किया है।

मैं यह जानता हूँ कि पं. लेखराम जी ने **'तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया'** नामक अपने ग्रन्थ में लिखा है–"शास्त्रार्थ चांदापुर से उद्धृतः मेला आरम्भ होने से पूर्व कुछ मौलवी साहिब स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के निवासस्थान पर पधारे और कहने लगे कि अच्छा हो यदि हिन्दू और मुसलमान मिलकर पादरियों के मत का खंडन करें। स्वामी जी ने कहा कि इस मेला में उचित प्रतीत होता है कि कोई किसी का पक्षपात न करे, प्रत्युत मेरे विचार में तो यह अच्छी बात है कि हम और मौलवी और पादरी तीनों पक्ष मिलकर प्रेम से सत्य का निर्णय करें। किसी से विरुद्धता करनी उचित नहीं।" (पृष्ठ–14–15)

ध्यातव्य है कि पं. लेखराम जी ने यह 'तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया' ग्रन्थ 1887 ई. में लिखा था। इसके लगभग 10 वर्ष पश्चात् 1897 ई. में उनके द्वारा संगृहीत ऋषि का उर्दू जीवनचरित्र प्रकाशित हुआ था। इस जीवनचरित्र में पं. लेखराम जी ने इसी विषय पर लिखा है–"प्रथम कुछ सज्जनों ने स्वामी जी के डेरे पर जाकर यह कहा कि हिन्दू और मुसलमान मिलकर पादरियों के मत का खण्डन करें।" (पृष्ठ 296, 2007 ई. संस्करण) इस जीवनचरित्र में मौलवी साहिबों ने यह बात स्वामी जी से कही थी–ऐसा उन्होंने नहीं लिखा है। पं. लेखराम जी ने अपने ही द्वारा 10 वर्ष पूर्व लिखित ग्रन्थ की बात को परिवर्तित कर जीवनचरित्र में इस रूप में लिखा, इसके पीछे अवश्य कोई ठोस कारण रहा होगा। अन्यथा वे इस जीवनचरित्र में भी पूर्ववत् यही लिखते कि कुछ मौलवी साहिबों ने स्वामी जी से यह कहा कि हिन्दू और मुसलमान मिलकर पादरियों के मत का खण्डन करें। परन्तु पं. लेखराम जी ने जीवनचरित्र में अपने ही पूर्व कथन का यथोचित संशोधन कर लिया है। इसी प्रकार 'तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया' में ऋषि के निधन के कारण के सम्बन्ध में जो उल्लेख किया था, उसमें भी पं. लेखराम जी ने जीवन चरित्र लिखते समय उचित संशोधन कर लिया था।

पं. लक्ष्मण जी ने पं. लेखराम जी के 'तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया' ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद 'अहमदी युक्तियों का खण्डन' किया था। अतः पं. लक्ष्मण जी इस बात से सुपरिचित होंगे कि पं. लेखराम जी ने उसमें मेला चांदापुर विषयक प्रकरण में क्या लिखा है। फिर भी पं. लक्ष्मण जी ने अपने उर्दू में लिखे गए महर्षि के 'सम्पूर्ण जीवन चरित्र' ग्रन्थ में लिखा है–"कई लोगों ने स्वामी जी के पास जाकर कहा कि आर्य और मुसलमान मिलके ईसाइयों का खण्डन करें तो अच्छा है।" (भाग 1, पृष्ठ 482, प्रथम संस्करण 2012 ई.) उन्होंने यह बात पं. लेखराम संगृहीत एवं 1897 ई. प्रकाशित उर्दू जीवनचरित्र अनुसार ही लिखी है, न कि 'तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया' के अनुसार। क्या यह भी विचारणीय नहीं है? ध्यातव्य है कि पं. लक्ष्मण जी के इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद एवं सम्पादन स्वयं विद्वान लेखक प्रा. जिज्ञासु जी ने 2012 में अर्थात् आज से केवल 4 ही वर्ष पूर्व किया है। उसमें भी उक्त प्रस्ताव मुसलमानों ने रखा था–ऐसी कोई सम्पादकीय टिप्पणी पढ़ने को नहीं मिलती है। यह भी विचारणीय है।

मेरी एक अन्य जिज्ञासा को तो एकदम ही टाला जा रहा है। जिज्ञासु जी ने अपने उसी लेख में लिखा है कि–"महर्षि ने कहा कि "सत्य न स्वदेशी है न विदेशी होता है।" महर्षि का यह कथन भी उपयुक्त प्रामाणिक जीवन चरितों में से किसी में दिए गए 'मेला चांदापुर' विषयक प्रकरण में पढ़ने को नहीं मिलता है। अतः मैंने यह जिज्ञासा की है कि यह कथन–सत्य न स्वदेशी है न विदेशी होता है", प्रा. जिज्ञासु जी ने किस ग्रन्थ में से लेकर अपने लेख में उद्धृत किया है? प्रा. जिज्ञासु जी ने आज पर्यन्त इस पर कुछ नहीं लिखा है।

जिज्ञासाओं का समाधान उचित प्रमाणों से ही सम्भव है। असम्बद्ध बातें तो प्रमाणों का विकल्प नहीं।

भावेश मेरजा
8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
जिला–भरुच, गुजरात–392015

www.thearyasamaj.org



## फरीदाबाद में हुआ ऋषि निर्वाण दिवस एवं दीपावली का आयोजन

डी.ए.वी. एन.टी.पी.सी फरीदाबाद में ऋषि निर्वाण दिवस का आयोजन किया गया। यज्ञ के द्वारा कार्यक्रम का प्रारम्भ किया गया। इस अवसर पर विद्यालय में वेद प्रचार का कार्यक्रम आयोजित किया जिसमें श्रीमान अजय आर्य प्रभाकर ने स्वामी दयानन्द के जीवन पर अपने भजनों के द्वारा प्रकाश डाल कर सबको मंत्रमुग्ध कर दिया। इस अवसर पर विद्यालय के छात्रों ने स्वामी जी के जीवन पर आधारित एक लघु नाटिका प्रस्तुत की। विद्यालय में इस अवसर पर दीपावली के पर्व के महत्व पर प्रकाश डाला गया और रंगोली बनाओ प्रतियोगिता का आयोजन किया। स्वस्थ रहने एवं कैंसर की जानकारी देने के लिए विद्यालय में एक चर्चा का आयोजन हुआ जिसमें छात्रों को कैंसर की ओर सचेत किया। कार्यक्रम के अन्त में विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती अलका अरोड़ा जी ने आए हुए विद्वानों का धन्यवाद किया एवं स्वामी जी के जीवन पर चलने की प्रेरणा दी। कार्यक्रम का आयोजन श्री जितेन्द्र दत्त शास्त्री ने किया।

## डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, जसोला विहार में हिन्दी-सप्ताह का आयोजन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, जसोला विहार, नई दिल्ली में 'हिन्दी-सप्ताह' का आयोजन किया गया। इसके अंतर्गत कक्षा प्रथम से बारहवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों ने हिन्दी भाषा के प्रोत्साहन हेतु विभिन्न गतिविधियों में भाग लिया। कक्षा प्रथम से पाँचवीं तक के विद्यार्थियों ने हिन्दी भाषा की वर्तमान स्थिति को उजागर करते हुए कविताओं का सस्वर पाठ किया। हिन्दी को राष्ट्र की पहचान बताते हुए एक मनोरंजक नाट्य-प्रस्तुति प्राथमिक स्तर के छात्रों द्वारा की गई। माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों के मध्य 'हिन्दी भाषा पर स्वरचित कविता व नारा-लेखन प्रतियोगिता' का आयोजन करवाया गया।

हर्ष कुमार, अरुंधति, सोनाली तथा अफशान के द्वारा स्वरचित कविताओं का सस्वर पाठ वाचन किया गया। कोमल बिंदल और मुस्कान ओझा ने **'हिन्दी का अस्तित्व'** विषय पर संवाद की रोचक प्रस्तुति की। हिन्दी भाषा के विभिन्न कालखंडों पर आधारित काव्य-प्रस्तुति तथा 'ईश्वर का कार्य: सर्वोत्तम कार्य' लघु-नाटिका ने सभी को मन्त्रमुग्ध कर दिया।

आठवीं कक्षा की छात्रा मिली नेगी द्वारा 'भक्ति-गीत पर नृत्य-प्रस्तुति', 'हिन्दी हैं हम' समूह-गान तथा नन्ही नायिका अविका का 'होली-गीत' भी हिंदी-दिवस समारोह के मुख्य आकर्षण रहे।

विभागाध्यक्ष श्रीमती वीना साहनी ने हिन्दी-दिवस की शुभकामनाएँ देते हुए 'हिन्दी-सप्ताह' के सफलतापूर्वक आयोजन के लिए हिन्दी-विभाग को बधाई दी। विद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. वी. के. बड़थ्वाल ने सभी विद्यार्थियों और हिन्दी-विभाग के प्रयासों की सराहना करते हुए 'हिन्दी-दिवस' की शुभकामनाएँ दीं। उन्होंने राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के बढ़ रहे महत्त्व के विषय में जानकारी देते हुए हिन्दी भाषा के विकास हेतु सदा प्रयत्नशील रहने के लिए छात्रों को प्रेरित किया।

## अलवर में लगा ज्ञान-मेला

आर्य कन्या विद्यालय समिति द्वारा संचालित आर्य पब्लिक स्कूल स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में ज्ञान मेला (KNOWLEDGE FAIR) प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि आर्य समाज के वयोवृद्ध नेता कैप्टन रघुनाथ सिंह जी ने प्रदर्शनी का शुभारम्भ किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री अशोक कुमार आर्य उप प्रधान, आर्य कन्या विद्यालय समिति ने की।

प्रदर्शनी का उद्देश्य विद्यार्थियों की प्रतिभा को निखारना था। प्रदर्शनी में मुख्य रूप से विज्ञान विषय से सम्बन्धित बायोगैस, ए.सी., वैक्यूम क्लीनर, इलेक्ट्रिक रॉड, जनरेटर; भूगोल विषय में रॉक साइकिल, बाँध द्वारा बिजली का उत्पादन; इतिहास विषय में ताज महल, कुतुबमीनार, अजबगढ़-भानगढ़; अंग्रेज़ी विषय में मनुष्य की सात अवस्थाएँ, प्रीपोजिशन, नाउन, थर्स्टी क्रो की कहानी; गणित विषय में मैथ्स गार्डन, क्लैण्डर तथा आर्ट एण्ड क्राफ्ट में कठपुतली शो, अत्यन्त आकर्षक रहे।

इस अवसर पर बड़ी संख्या में अभिभावक, अतिथि, अन्य विद्यालय के विद्याथियों ने प्रदर्शनी का अवलोकन किया तथा बच्चों की प्रतिभा एवं मेहतन की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

## एम.पी.डी. डी.ए.वी. स्कूल कालांवाली में हुआ 21 कुण्डीय महायज्ञ

माता पुन्ना देवी डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कालांवाली में आदरणीय प्रधानाचार्या श्रीमती संगीता कक्कड़ जी की अध्यक्षता में डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति के अध्यक्ष आदरणीय ''श्री पूनम सूरी'' जी के उपदेशात्मक 'नई दिशा नया संकल्प' से प्रेरित होकर एक '21 कुण्डीय यज्ञ' का आयोजन विद्यालय प्रांगण में किया गया। यह यज्ञ विद्यालय के दसवीं कक्षा के बच्चों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए और उनको अग्रिम भविष्य के लिए उचित दिशा निर्देश देते हुए किया गया। इस महायज्ञ में दसवीं कक्षा के बच्चे व अभिभावक यजमान के रूप में उपस्थित रहे। 21 कुण्डीय यज्ञ के पश्चात विद्यालय में अभिभावक मंत्रणा का आयोजन किया गया। प्रधानाचार्या महोदया जी ने बच्चों तथा उनमें अभिभावकों को सम्बोधित करते हुए दसवीं कक्षा में विद्यर्थियों के अग्रिम भविष्य के लिए बहुमूल्य सुझाव दिए। इस अवसर पर विद्यालय के सभी अध्यापक व अध्यापिकाएँ उपस्थित रहे।

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 16/17-11-2016
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39\57

# डी.ए.वी. नाभा में दीपावली और ऋषि निर्वाण दिवस यज्ञ का आयोजन

डी.ए.वी. सैंटनरी पब्लिक स्कूल नाभा एवम् आर्य युवा समाज के तत्वाधान में विद्यालय की प्रधानाचार्या मंजुला सहगल जी की अध्यक्षता में दीपावली पर्व एवम् महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के निर्वाण दिवस के उपलक्ष्य में एक कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रातः कालीन सभा में विद्यालय के आचार्य रोहित शास्त्री ने दीपावली पर्व के महत्व को समझाया उन्होंने बताया कार्तिक मास की अमावस्या को यह पर्व हर्षोल्लास के साथ समस्त भारत वर्ष में मनाया जाता है। इसी दिन श्री राम चन्द्र वनवास से अयोध्या वापिस लौटे थे।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अजमेर में इसी दिन अपने प्राणों का त्याग किया। स्वामी दयानन्द ने समाज में फैली कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई और आर्य समाज की स्थापना की। उनकी मृत्यु कार्तिक मास की अमावस्या को हुई। उनका अधूरा स्वप्न आर्य समाज और डी.ए.वी. संस्थाएं पूरा कर रही हैं।

इस अवसर पर विद्यालय में यज्ञ सम्पन्न कराया गया जिसमें विद्यालय के सभी विद्यार्थियों ने सस्वर वेद मन्त्रों का पाठ करते हुए सबके लिए मंगल कामना की।

दीपावली पर्व पर विद्यालय के छात्रों द्वारा राम के अयोध्या आगमन को नृत्य–नाटिका के रूप में चित्रित किया गया। साथ ही विद्यालय में प्रदूषण–मुक्त दीपावली का संदेश दिया गया। विद्यालय में रंगोली, थाली सजावट प्रतियोगिता, कक्षा की सजावट, दीया सजावट आदि प्रतियोगिताएं करवाई गई व छात्रों ने एक दूसरे को मिट्टी के दीए भेंट किए।

विद्यालय की प्रधानाचार्या मंजुला सहगल ने सभी को इस पावन पर्व की बधाइयां देते हुए कहा कि हमें प्रण लेना चाहिए कि हम इस वर्ष प्रदूषण मुक्त दीपावली मनाएंगे और अपने पर्यावरण को बचाएंगे।

# डी.ए.वी. ककराला में मनाया गया 'वैदिक प्रचार' सप्ताह

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पंजाब के तत्वाधान में और क्षेत्र निर्देशक श्री विजय कुमार व प्रबंधक श्रीमती मधु बहल के मार्गदर्शन में सात दिवसीय 'वेद प्रचार' समारोह डी.ए.वी. पब्लिक सी. सै. स्कूल ककराला में बड़े हर्षोल्लास से मनाया गया। उसका शुभारम्भ विद्यालय के प्राचार्य श्री मनोज शर्मा जी ने दीप प्रज्ज्वलित करके किया। विद्यार्थियों ने प्रतिदिन दैनिक यज्ञ में वेद मंत्रों का उच्चारण व वैदिक विचारधारा से सम्बन्धित भजन एवं भाषण देकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। मंच संचालन श्री अनिल शास्त्री स्कूल के धर्म शिक्षक ने किया।

'वैदिक प्रचार' सप्ताह में विद्यार्थियों की वैदिक मंत्रोच्चारण, गीता–श्लोक पाठ, वेदों पर आधारित भाषण और भजन गीत प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। निर्णायक के रूप मे अध्यापक उर्मिल देवी किरण व मीनू वालिया उपस्थित रहे। स्कूल के प्राचार्य जी ने भाषण के माध्यम से छात्रों को वेदों के अनुसार दिनचर्या अपनाने को कहा। छात्रों की अनेक गतिविधियों में अमृतपाल, राम, मनमीत कौर, गुरविन्द्र कौर भृगु, रूपाली, कशिश, प्रिया और सोनिया इत्यादि छात्रों का प्रदर्शन शानदार रहा। सभी छात्रों को उपहार भेंट करके आशीर्वाद दिया। यज्ञ महिमा व शान्ति पाठ से समारोह का समापन किया।

# बी.बी. के. डी.ए.वी. अमृतसर ने रैड-क्रॉस शिविर में जीती ओवर-आल-ट्राफी

महर्षि दयानन्द जी के महत्त्व पूर्ण विचार नारी सशक्तिकरण, को साकार कर रही बी.बी.के डी.ए.वी. कॉलेज की छात्राओं ने फतेहगढ़ साहिब में आयोजित रेड क्रॉस कैम्प की ऑवर ऑल ट्रॉफी जीती बी.बी.के डी.ए. वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर की रेड क्रॉस यूनिट द्वारा भाई दिवस के उपलक्ष्य में फतेहगढ़ साहिब, माता गुजरी कॉलेज में आयोजित कैम्प में ऑवर ऑल ट्रॉफी जीतकर शानदार प्रदर्शन किया।

यह कैम्प भारतीय रेड क्रॉस सोसाइटी की पंजाब राज्य शाखा, चण्डीगढ़ द्वारा आयोजित किया गया जिसमें विभिन्न प्रतियोगिताएँ जैसे–प्रथम उपचार, कविता–पाठ, प्रश्नोत्तरी, भाषण, लोक–गीत, समूहगान एवं स्लोगन–लेखन आयोजित की गईं। इस अवसर पर श्री अविनाश राय खन्ना, उप अध्यक्ष, रेड क्रॉस सोसाइटी, पंजाब, मुख्यातिथि के रूप में पधारे।

बी.बी.के. डी.ए.वी. की सोलह छात्राओं की टीम ने विभिन्न प्रतियोगिताओं में भाग लिया और प्रथम उपचार एवं समूह–गान में प्रथम पुरस्कार, प्रश्नोत्तरी एवं कविता–पाठ में द्वितीय पुरस्कार और भाषण, लोक गीत एवं स्लोगन–लेखन में तृतीय स्थान अर्जित किया। छात्राओं ने नशा–विरोध, भ्रूणहत्या एवं समाज में फैली अन्य बुराईयों के नाश के उपलक्ष्य में निकाली गई रैली में भी भाग लिया।

प्राचार्या डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने विजेता टीम को हार्दिक बधाई देते हुए उन्हें समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने हेतु प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी नारी को सार्वभौमिक रूप में सशक्त बनाने के पक्षधर थे। उनके स्वप्न को महाविद्यालय की छात्राएँ समस्त क्षेत्रों में विजयी होकर साकार कर रही हैं। इस कैम्प में असिस्टैंट प्रो. हरप्रीत अनेजा एवं सुश्री इशा खन्ना ने छात्राओं को सहभागिता दी।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए एस.के शर्मा द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – पूनम सूरी